ांधी जन्म-शताब्दी प्रकाशन

यदि मैं तानाशाह बना

गाधीजी के जीवन के प्रेरणादायक प्रसग

•

नम्पादक
विष्णु प्रभाकर

•

१९६९
गांधी स्मारक निधि
सस्ता साहित्य मंडल
का संयुक्त प्रकाशन

राष्ट्रीय गांधी जन्म-शताब्दी समिति

श्री रंगनाथ रामचंद्र दिवाकर की अध्यक्षता में समिति की प्रकाशन सलाहकार समिति के तत्त्वावधान में 'गांधी स्मारक निधि' के द्वारा 'सस्ता साहित्य मंडल' के सहयोग से यह पुस्तकमाला प्रकाशित कराई जा रही है।

१, राजघाट कालोनी,
नई दिल्ली

देवेन्द्रकुमार गुप्त
संगठन मंत्री
राष्ट्रीय गांधी जन्म शताब्दी
समिति

प्रकाशकीय

महात्मा गाधी के जीवन के लोकोपयोगी प्रसगो की इस पुस्तक-माला को दो पुस्तके पाठको के हाथो मे पहुच चुकी है। तीसरी पहुच रही है। इन तथा आगे की तीन और पुस्तको मे गाधीजी के व्यक्तित्व तथा कृतित्व पर प्रकाश डालनेवाले प्रसग दिये गए है।

इन पुस्तको की सामग्री अनेक पुस्तको मे से चुनकर ली गई है। उन पुस्तको तथा उनके लेखको के नाम प्रत्येक पुस्तक के अन्त मे दे दिये गए हैं। इन प्रसगो की भाषा को अधिकाधिक परिमार्जित कर दिया गया है। यह कार्य श्री विष्णु प्रभाकर ने किया है। वह हिन्दी के जाने-माने कथाकार तथा नाटककार है। उन्होने हिन्दी की अनेक विधाओ को समृद्ध किया है। इन पुस्तको की भापा को अपनी कुशल लेखनी से उन्होने न केवल सरस बनाया है, अपितु उसे सुगठित भी कर दिया है। इसके लिए हम उनके आभारी है।

अत्यन्त व्यस्त होते हुए भी श्री दिवाकरजी ने इस पुस्तक-माला की भूमिका लिख देने की कृपा की, तदर्थ हम उनके अनुग्रहीत है।

पुस्तको का मूल्य इतना कम रखने के लिए निधि द्वारा आशिक आर्थिक सहायता दी जा रही है।

हमे पूरा विश्वास है कि इन पुस्तको का सभी वर्गो तथा क्षेत्रो मे हार्दिक स्वागत होगा और इनका देश-व्यापी ही नही, विश्व-व्यापी प्रचार भी।

—मत्री

भूमिका

जो वात उपदेशो के वडे-वडे पोथे नही समझा सकते, वह उन उपदेशो मे से किसी एक को भी जीवन मे उतारने के समझ मे आ जाती है। इसलिए गाधीजी कहते थे कि मेरा जीवन ही मेरा सन्देश है। उनके जीवन का यह सन्देश उनके दैनन्दिन जीवन की घटनाओ मे प्रदर्शित और प्रकाशित होता है।

ससार के तिमिर का नाश करने के लिए मानव-इतिहास मे जो व्यक्ति प्रकाश-पुज की भाति आते है उनका सारा जीवन ही सत्य और ज्ञान से प्रकाशित रहता है। गाधीजी के जीवन मे यह वात साफ दिखाई देती है। इस पुस्तक-माला मे गाधीजी के जीवन के चुने हुए प्रसगो का सकलन करने का प्रयास किया गया है। उनका प्रकाश काल के साथ मन्द नही पडता। वे क्षण मे चिरन्तन के जीवन के किसी पहलू को प्रदर्शित करते है। उनकी प्रेरणा स्थानीय न होकर विश्वव्यापी है।

ये प्रसग गाधीजी के जीवन से सम्बन्धित प्राय सभी पुस्तको के अध्ययन के वाद तैयार किये गए है। हर प्रसग की प्रामाणिकता की पूरी तरह रक्षा की गई है। फिर भी वे अपने आपमे सम्पूर्ण और मौलिक है।

यह पुस्तक-माला अधिक-से-अधिक हाथो मे पहुचे तथा भारत की सभी भाषाओ मे ही नही, वरन् ससार की अन्य भाषाओ मे भी इसका अनुवाद हो, ऐसी अपेक्षा है। मैं आशा करता हू कि गाधी-जन्म-शताब्दी के अवसर पर प्रकाशित यह पुस्तक-माला अपनी प्रभा से अनगिनत लोगो के जीवन को प्रेरित और प्रकाशित करेगी।

रंगनाथ दिवाकर

विषय-सूची

यदि मैं
तानाशाह बना

: १ :

यदि मैं तानाशाह बना

आराम करने की दृष्टि से एक बार गाधीजी मसूरी मे ठहरे हुए थे। वे कही भी जायं, पत्रकार उनके पीछे-पीछे वही पहुंच जाते। उन दिनों तो कैबिनेट-मिशन भारत में आया हुआ था। भारत की स्वाधीनता की बात-चीत चल रही थी। एक विदेशी पत्र-प्रतिनिधि ने उनसे पूछा, "अगर आपको एक दिन के लिए भारत का तानाशाह बना दिया जाय तो आप क्या करेंगे?"

गाधीजी ने उत्तर दिया, "पहले तो मै उसे स्वीकार ही नही करूगा, परन्तु यदि मै एक दिन के लिए तानाशाह बन ही गया तो दिल्ली के हरिजनो के झोपडे, जो वायसराय भवन के अस्तबल जैसे है, साफ करने मे वह दिन बिताऊगा।"

प्रतिनिधि ने कहा, "मान लीजिये कि लोग आपकी तानाशाही दूसरे दिन भी जारी रखे?"

गाधीजी सहज भाव से बोले, "तो दूसरे दिन भी वही पहले दिन का काम जारी रहेगा।"

मूंगफली के दूध का प्रयोग तो करो

गाधीजी दूध पीना पसन्द नही करते थे। डिब्बे के दूध से तो उन्हे अत्यन्त अरुचि थी। फिर भी जब वे दक्षिण अफ्रीका मे रहते थे तब वहा कॉफी आदि का प्रयोग खूब चलता था। उसमे डालने के लिए दूध की जरूरत होती थी, लेकिन आवश्यकता के अनुसार दूध नही मिलता था। इसी कारण डिब्बे का दूध इस्तेमाल करना पडता था।

एक दिन गाधीजी ने रावजीभाई पटेल से कहा, "मुझे इस दूध का उपयोग करना अच्छा नही लगता। इसे बन्द करना चाहिए। क्या बादाम की गिरी का दूध निकाल कर उसका उपयोग हो सकता है? मुझे लगता है कि हो सकता है।"

रावजीभाई ने उत्तर दिया, "मै ऐसा करके देखूगा।"

और उन्होने बादाम की गिरी को पानी के साथ घोटकर उसका दूध तैयार किया। उसे कॉफी मे डाला, लेकिन पीने वालो को तनिक भी अन्तर नही मालूम हुआ।

गाधीजी बहुत प्रसन्न हुए, परन्तु शीघ्र ही उनके दिमाग मे एक विचार उठा कि यह तो महगा सौदा है। सोचते-सोचते इसका भी उन्हे एक उपाय सूझ गया। उन्होने रावजीभाई से कहा, "बादाम की गिरी का दूध निकालकर कॉफी मे डालना तो हमे बहुत महगा पडेगा। तुम मूगफली के दानो के दूध का प्रयोग तो करके देखो।"

दूसरे दिन रावजीभाई ने ऐसा ही किया। उस दिन भी किसी को पता नही चला। बस, उस दिन से फिनिक्स आश्रम मे दूध को छुट्टी मिल गई।

: ३ :

मुझे पैसे का दुःख नहीं है

महात्माजी के आग्रह और आदेशानुसार एक बार ऐसी योजना बनाई गई कि श्री गोखले की आगामी पुण्यतिथि पर उनके भाषणो और निबन्धो का एक सग्रह गुजराती भाषा में प्रकाशित किया जाय। उसके सपादन का भार सोपा गया श्री नरहरि द्वारकादास परीख को। अनुवाद एक ऐसे सज्जन को करना था, जो लेखक के रूप मे काफी ख्याति प्राप्त कर चुके थे।

उस सज्जन ने जो अनुवाद किया, वह नरहरिभाई को अच्छा नही लगा। परन्तु चूकि कई शिक्षको ने उसकी तारीफ की थी, इसलिए वह पुस्तक छपने के लिए दे दी गई। जब वह करीब-करीब पूरी छप चुकी, तब उसके फार्म गाधीजी को देकर नरहरिभाई ने कहा, "आप ही इसकी भूमिका लिख दीजिए।"

गाधीजी ने दूसरे दिन नरहरिभाई को बुलाकर कहा, "नरहरि, यह भाषा तो बिलकुल नही चल सकती। ऐसा शाब्दिक अनुवाद कौन समझेगा ? तुमने इसे पास कैसे किया ?"

नरहरिभाई ने गाधीजी को सही स्थिति बता दी और कहा कि दूसरे शिक्षको की तारीफ करने के कारण वह अपना स्वतन्त्र

मत व्यक्त नही कर सके। इस पर गाधीजी बोले, "लार्ड विलिंग-डन (बम्बई के तत्कालीन गवर्नर) ने बम्बई विश्वविद्यालय के गत उपाधि-वितरण के अवसर पर अपने भाषण मे कहा था कि हिन्दुस्तान के स्नातको मे 'नही' कहने की हिम्मत नही है। सच है न ? मै तो तुमसे यही आशा करता हू कि अगर यह अनुवाद तुम्हे नही जचा था तो साफ 'नही' कह देना था। मैंने तुम्हे सम्पादक का काम सौपा था। वह कर्त्तव्य तुमने पूरी तरह नही निभाया। अच्छा, पूरी किताब छप गई है क्या ? अगर छप गई है तो भी हमे इसे रद्द करना होगा।"

नरहरिभाई ने कहा, "अबतक कोई सात सौ रुपये खर्च हो गए होगे। क्या वे सब बेकार जायगे ?"

गाधीजी बोले, "तो क्या जिल्द बधवा कर अधिक पैसे बिगाडने हैं। सात सौ तो क्या, अगर सात हजार रुपये भी व्यर्थ जायगे तो मै जाने दूगा। ऐसी किताब जनता के आगे क्यो रखी जाय ? मुझे पैसे का दु ख नही है। चिन्ता केवल इसी बात की है कि श्री गोखले की पुण्य-तिथि के केवल दो महीने रह गये है।"

: ४ .

गरीबों के प्रतिनिधि के लिए यही सबसे उपयुक्त है

गोलमेज परिषद् मे भाग लेने के लिए गाधीजी पानी के जहाज से लदन गये थे। जहाज पर पहुच जाने के बाद उन्होने

सबसे पहले सामान की जांच-पड़ताल की। उनकी पैनी निगाह से कुछ बचा न रहा। ढेर सारा सामान देखकर वह व्यथा से भर आए। बोले, "भाग्य से हम दूसरे दर्जे की कोठरी मे यात्रा कर रहे है किन्तु मान लो, हम निचले दर्जे के मुसाफिर होते तो इतने सामान की व्यवस्था कैसे करते!"

महादेवभाई ने उत्तर दिया, "कुछ ही घंटो मे हमें तैयार होना पड़ा था। हमने ये सब सूटकेस उधार लिये है। घर पहुचते ही सब लौटा देगे। इसके अतिरिक्त कई मित्रो ने अपनी फालतू चीजे हमें दे दी है। हम इन्कार नही कर सके। कुछ जानकार मित्रो ने हमे आवश्यक चीजो से लैस रहने की सलाह भी दी है। इसीलिए हमे यह सब करना पड़ा।"

इसी तरह के बहुत से जवाब उन्हे दिये गए। लेकिन इससे वह और भी उत्तेजित हो उठे। उन्हे बडा आघात पहुचा। बोले, "तैयारी के लिए समय अभाव के का बहाना करना उचित नही है। मित्रो से कह सकते थे कि हमे इस सामान की कुछ भी आवश्यकता नही है। लेकिन तुम तो जो कुछ आया, सब लेते गये, मानो तुम्हे लदन मे पाच वर्ष रहना हो। सूटकेस वापस कर दोगे, लेकिन इससे क्या! अपनी गरीबी और परिग्रह के संबंध मे क्या तुम्हारी यही धारणा है? तुम या तो स्वय अपने-को धोखा दे रहे हो या मुझे धोखा देना चाह रहे हो। तुमने मित्रो की सलाह ली तो तुम्हे उन्हींके साथ रहना चाहिए था। यहां तो मेरे साथ हो, इसलिए मेरी सलाह के अनुसार चलना चाहिए।"

अन्त मे यह निश्चय किया गया कि सभी आवश्यक वस्तुए

अदन से वापस लौटा दी जाय। इस कार्य मे तीन दिन लग गये। चौथे दिन फिर उनके सामने सामान की सूची पेश की गई। उन्होने कहा, "अब मै तुम्हारी सूची मे दखल नही दूगा। मै तो यही चाहता हू कि लदन की गलियो मे तुम्हे उसी तरह घूमता देखू, जिस तरह तुम शिमला मे घूमा करते हो। यदि मै देखूगा कि तुम्हारे पास पर्याप्त कपडे नही है तो अधिक ऊनी कपडे प्राप्त करूगा। विश्वास रखो कि वहा के लोग हमारे पास बढिया सूटकेस देखकर दुखी होगे। यदि तुम हिन्दुस्तान मे खादी के झोले से काम चला सकते हो तो इग्लैड मे क्यो नही चला सकते ? हमे कोई चीज ऐसी नही रखनी चाहिए, जो हम साधारण अवस्था मे न रख सकते हो।"

इसका यह अर्थ हुआ कि दूरवीन और सफरी चारपाई जैसे सभी चीजे लौटा देनी पडी। ऐसे अवसर पर वह मजाक करने से भी नही चूके। जब यह चर्चा चल रही थी तो श्री शुएब कुरेशी उनसे मिलने आये। गाधीजी वोले, 'अच्छा, शुएब, यदि नवाब साहब (भोपाल) की पार्टी मे कोई साहब कश्मीरी दुशाले खरीदना चाहते हो तो मुझे बताओ। मित्रो ने मेरे लिए बहुत से शाल दिये है। उनमे एक शाल इतना मुलायम और बारीक है कि अगूठी के बीच मे से निकल सकता है। उन्होने सोचा होगा कि करोडो भारतीयो का प्रतिनिधित्व करने के लिए यह शाल ओढकर ही मुझे गोलमेज परिषद मे जाना चाहिए। अच्छा हो, बेगम साहिबा इस बहुमूल्य शाल को लेकर इसके बदले मे गरीबो के उपयोग के लिए मुझे नकद रुपये दे दे। गरीबो के एकमात्र प्रतिनिधि के लिए यही सबसे उपयुक्त है।"

: ५ :

चार्ली, कार्यक्रम कैसा रहा ?

गाधीजी उन दिनो दक्षिण अफ्रीका में थे। एक बार गोपाल-कृष्ण गोखले ने दीनबन्धु एण्ड्रयूज को उनके पास भेजा। गोखले चाहते थे कि गाधीजी अपने विचारो में कुछ परिवर्तन करे । बेचारे एण्ड्रयूज को इस काम मे तनिक भी सफलता नही मिली। उलटे वह स्वय अपने विचारो में परिवर्तन करके गांधीजी के शिष्य बन गये ।

एक दिन सवेरे गाधीजी को एण्ड्रयूज से कुछ काम था, लेकिन सब जगह खोज लेने पर भी वह मिल नही पा रहे थे। तभी किसी ने आकर बताया, "बापूजी, आज इतवार का दिन है। एण्ड्रयूजसाहब, गिरजाघर गये हुए है। आज वह वहा प्रार्थना करायगे और फिर भाषण देगे।"

गाधीजी ने कहा, "तो चलो, हम भी वही चलते है। एण्ड्रयूजसाहब की बाते सुनेगे।"

और वह तुरन्त गिरजाघर की ओर चल पडे, लेकिन वह गिरजाघर तो केवल गोरो के लिए था। गाधीजी थे काले आदमी। वह अन्दर कैसे जा सकते थे ? उन्हे रोक दिया गया। कहा, "आप इस गिरजे के अदर नही जा सकते । पास मे ही नीग्रो लोगो का गिरजाघर है। उसमें चाहे तो जा सकते है।"

गाधीजी ने उत्तर दिया, "मेरे यहा आने का उद्देश्य एण्ड्रयूजसाहब का व्याख्यान सुनना था, इसलिए दूसरे गिरजे में

जाना व्यर्थ है।"

वह लौट आये। थोडी देर बाद एण्ड्रयूजसाहब भी आ गये। गाधीजी ने उनसे पूछा, "क्यो चार्ली, कार्यक्रम कैसा रहा ? मै भी तुम्हारा भाषण सुनने गया था, लेकिन काला आदमी होने के कारण मुझे गिरजे के भीतर नही जाने दिया गया।"

यह सुनकर एण्ड्रयूजसाहव की आखे डबडबा आई। गाधीजी के हाथो को अपने हाथो मे लेकर वह बोले, "मोहन, यह कैसी अजीब और शर्म की बात हुई ! आज के मेरे व्याख्यान के प्रधान पुरुष तुम थे। मै 'मोहनदास करमचन्द गाधी' पर बोल रहा था। सभी लोग एकाग्र मन से मेरी बात सुन रहे थे और उन्होने तुम्हे ही अन्दर आने से रोक दिया !"

: ६ :

भाई, मैं लोभी ठहरा

एक दिन एक धनिक महाशय गाधीजी से मिलने के लिए आये। उनकी बातो का कोई अन्त नही था। देखते-देखते एक घटा बीत गया और बाहर दूसरे मिलनेवालो की भीड सघन होती चली गई। उनमे एक डाक्टर भी थे। उन्हे गाधीजी से कोई वहुत जरूरी काम था। वह वहुत बेचैन हो रहे थे। एक घटे बाद जब वह धनिक महाशय चले गये तो उनकी जान-मे-जान आई।

अब उनकी बारी थी। वह अन्दर पहुचे। परेशान तो थे ही।

कुछ कठोर होकर बोले, बापूजी, क्या आप उस बैल को दुह रहे थे ? उसमे से कुछ दूध निकला भी ?

अत्यन्त नम्र होकर मानो क्षमा माग रहे हो, गाधीजी बोले, "भाई, मै लोभी ठहरा। जिस तरह तुम सब लोगो की खुशामद करता हू वैसे ही उनकी खुशामद भी कर रहा था। शायद किसी दिन देश के काम आ जाय।"

और यह कहकर वह हॅस पडे।

: ७ :

अब तुम्हारी बारी है

अस्पृश्यता-निवारण के सबध में उन दिनो गाधीजी उड़ीसा मे पैदल यात्रा कर रहे थे। सायकाल के समय पड़ाव पर पहुच कर प्रार्थना-सभा में अनेक व्यक्ति उपस्थित होते थे। वे कुछ-न-कुछ भेट भी दिया करते थे। कभी वह भेट नकद होती, कभी वस्तु के रूप मे। प्रार्थना-प्रवचन के बाद गाधीजी उन वस्तुओ को नीलाम कर देते थे।

उस दिन वह कटक में थे। सदा की भाति लोगो ने बहुत-सी वस्तुए भेट मे दी। गाधीजी उन्हे नीलाम करने लगे। एक कुम्हार ने बाल-गोपाल (कृष्ण) की एक छोटी-सी मूर्ति भेट मे दी। उस बेचारे कृष्ण की भी नीलाम की बारी आ गई। गाधीजी ने उस मूर्ति को उठाया और बोले, "अब तुम्हारी बारी है।"

कलकत्ता के उद्योगपति श्री भागीरथ कानोडिया उस

सभा मे उपस्थित थे । वह हँसकर बोल उठे, "बापू, आपने तो कृष्ण को भी नीलाम पर चढाने से नही बक्शा !"

गाधीजी खूब हँसे । बोले, "अरे, तुम जानते नही, यह तो सदा ही नीलाम होता रहा है । कोई नीलाम करनेवाला और खरीदनेवाला होना चाहिए ।"

शायद कानोडियाजी को विश्वास नही आया । गाधीजी ने कहा, "क्या तुमने मीरा का वह पद नही सुना

"माई मैने गोविंद लीनो मोल,
कोई कहे सस्ता, कोई कहे महंगा, लीनो तराजू तोल ।"

उस दिन सबसे अधिक कीमत उसी मूर्ति की मिली ।

: ८ :

मेरा सच्चा डाक्टर राम ही है

नौआखाली प्रवास के समय एक शाम को दूध नही मिला । गाधीजी बोले, "तो क्या हुआ ! नारियल का दूध बकरी के दूध का काम अच्छी तरह देगा और बकरी के घी के स्थान पर नारियल का तेल खाया जा सकता है ।"

मनु ने नारियल का दूध बकरी के दूध की तरह ही तैयार किया, लेकिन वह दूध पचने मे भारी पडा । गाधीजी को दस्त आने लगे । शाम तक बहुत ही कमजोरी हो गई । खूब पसीना छूटा । एक बार तो उन्होने दोनो हाथो से अपना सिर थाम लिया । यह देखकर मनु घबरा गई । उसने निर्मल दा (प्रो०

निर्मलकुमार बोस) को पुकारा। सोचा, सुशीलाबहन को बुलवाना चाहिए। कही कुछ हो गया तो मै मूर्ख समझी जाऊगी! सुशीलाबहन प्रार्थना से पहले ही चली गई थी।

यह सोचकर उसने सुशीलाबहन को चिट्ठी लिखी और उनतक पहुचाने के लिए निर्मलदा को देने चली। तभी सहसा गांधीजी जाग उठे। बोले, "मनुडी, तूने निर्मलबाबू को पुकारा, यह मुझे बिलकुल अच्छा नही लगा। पर तेरी उम्र को देख कर क्षमा करता हू। फिर भी ऐसे समय मे कुछ न करके हृदय से राम-नाम लेने की तुझसे आशा रखता हू। मै तो मन मे राम नाम ले ही रहा था। तू भी निर्मलबाबू को पुकारने के स्थान पर राम-नाम लेना शुरू कर देती तो मुझे बहुत अच्छा लगता। अब तू इस बारे मे सुशीला से न कहना, न उसे बुलाना। मेरा सच्चा डाक्टर राम ही है। उसे मुझसे काम लेने की गरज होगी तबतक वह जिलायेगा, नही तो उठा लेगा।"

मनु ने जब गाधीजी की ये बाते सुनी तो उसने चिट्ठी वापस ले ली। गाधीजी बोले, "तो तूने सुशीला को चिट्ठी लिख ही दी?"

मनु ने उत्तर दिया, "जीहा।"

गाधीजी बोले, "आज तुझे और मुझे ईश्वर ने बचा लिया। यह चिट्ठी पढकर सुशीला दौडती हुई मेरे पास आती, वह मुझे जरा भी अच्छा न लगता। मै तुझपर, अपने पर, चिढता। यदि राम-नाम का मत्र मेरे हृदय मे गहरा उतर जायगा तो मै कभी बीमार होकर नही मरूगा। यह नियम हर आदमी के लिए है, केवल मेरे लिए नही।"

और गाधीजी उसी रात को पूर्ण स्वस्थ हो गये।

तुम सच कह रही हो

एक वार कस्तूरवा गाधी ने गाधीजी से कहा, "सारी दुनिया के लोग आपके पास आकर आपसे वाते करते है। अपने दिल की वाते आपसे कह लेते है, लेकिन मै आपकी पत्नी हू। हमेशा आपके नजदीक रहती हू, परन्तु फिर भी दिल खोलकर आपसे बाते करने का मौका नही पाती। क्या यह मुनासिब है? मुझे भी तो आपके साथ अपने दिल की वाते करके अपनी अज्ञानता को दूर करने का मौका मिलना चाहिए। वाहर के लोग मुझसे ईर्ष्या करते होगे कि मै आप सरीखे महात्मा की धर्मपत्नी हू। आपसे जी भर बाते करके सद्ज्ञान प्राप्त करती हू, लेकिन मेरे दुख को कौन जाने? मुझे पाच मिनट भी बाते करने का समय नही मिलता।"

स्नेह-भरे स्वर मे गाधीजी वोले, "तुम सच कहती हो। मुझे तुमको बाते करने के लिए समय जरूर देना चाहिए। तुम कहो, कितना समय दिया जाय?"

बा सकुचाकर वोली, "आपको तो सवेरे चार वजे उठने से लेकर रात को सोने के समय तक लिखने-पढने और मिलनेवालो से बाते करने से जरा भी फुर्सत नही मिलती। मै कैसे कहू कि मुझे इतना समय दे। यह तो आप ही जाने।"

गाधीजी ने कहा, "अच्छा, तो आज से रात को सोते समय मेरे सिर पर बादाम का तेल लगाने का काम तुम सभाल लो।

उसी समय मेरे साथ बाते करने का अवसर भी मिलेगा। आज से कोई दूसरा आदमी मेरे सिर पर तेल नही लगा सकेगा। तुमको फुर्सत न हो तब तुम्हारे कहने पर ही कोई और इस काम को कर सकेगा।"

: १० :

मेरी सेवा का अर्थ दरिद्रनारायण की सेवा है

उन दिनों गाधीजी गुजरात का दौरा कर रहे थे। बोरसद पडाव की बात है। कमलनयन बजाज की असावधानी से उनके छानने के टुकडो मे से एक टुकडा खो गया। यह तय था कि पता लगने पर गाधीजी को दुख होना था और यह भी निश्चय था कि वह पन्द्रह-बीस मिनट तक इस विषय पर कमलनयन को भाषण देगे। इसलिए किसी तरह वह दिन तो कमलनयन ने निकाल दिया। अगले दिन गाधीजी का मौन-दिवस था। बहुत-से बडे-बडे नेता उनसे मिलने के लिए आनेवाले थे, इसलिए उस दिन भी उसकी सूचना उनको देना ठीक नही लगा। वह एक नया कपडा ढककर उनके खाने-पीने की चीजो को ले आये। सोचा था कि व्यस्तता के कारण शायद उनकी निगाह न पडे, लेकिन गाधीजी की दृष्टि तो गृद्ध-दृष्टि थी। नया कपडा देखकर वह मुस्कराये और अगुलियो के इशारे से कमलनयन को डाटते हुए मानो कहा, "मै तुम्हारी चालाकी समझ गया हू !"

और सचमुच मौन पूरा होने पर उन्होंने कमलनयन को बुलाया। पूछा, "क्या बात है ?"

कमलनयन ने उत्तर दिया, "कपडा मेरी गफलत से खो गया, इसलिए मुझे दूसरा लेना पडा।"

उस समय कोई और आनेवाला था। वह बोले, "सवेरे प्रार्थना के बाद मेरे साथ घूमने चलना।"

अगले दिन सुबह कमलनयन उनके साथ घूमने गये। पीछे-पीछे और लोग भी थे। गांधीजी ने दर्दभरे स्वर मे कहा, "ऐसी गफलत हमसे कैसे हो सकती है ? दरिद्रनारायण की सेवा का हमारा व्रत है। अगर उसका खयाल रखे तो ऐसी गफलत कभी न हो। अपने काम मे हमारा ध्यान रहे तभी हमारा चित्त एकाग्र हो सकता है, ज्ञान मिल सकता है और कार्य की सिद्धि हो सकती है, नही तो हमारी सेवा और कार्य का कोई अर्थ ही नही रह जाता।"

कमलनयन ने उत्तर दिया, "दरिद्रनारायण की सेवा का व्रत तो आपका है। मै तो आपकी चाकरी मे हू।"

ऐसा कहकर वह बात को टालना चाहते थे, लेकिन गाधीजी तो और भी गम्भीर हो आये। उनके हृदय मे मानो वेदना भरी हुई थी। बीस-पच्चीस मिनट तक समझाते रहे। बोले, "जब मै दरिद्रनारायण की सेवा मे लग गया तो मेरी सेवा करने का अर्थ भी दरिद्रनारायण की सेवा करना है। फिर तू तो जमनालालजी जैसे कुशल व्यापारी का बेटा है। ऐसी गफलत तो तुझसे हो ही कैसे सकती है। इसके अलावा तू तो कातता भी है। इसमे कितना परिश्रम होता है, यह तुझे मालूम है ? वह कपडा खो गया। यह

बैठे तब सहसा उन्होने उस पूनी के टुकडे को याद किया। जिस लडकी ने उसे उठाया था उसकी खोज हुई। वह आई। गाधीजी ने कहा, "वह पूनी का टुकडा जो तुमने उठाया था, ले आओ।"

लडकी ने उत्तर दिया, "उसे तो मै कचरे की टोकरी मे फेक आई।"

गाधीजी यह सुनकर बडे क्रुद्ध हुए। वोले, "मैने उसे उठाने के लिए इसलिए नही कहा था कि उसे तू कचरे की टोकरी मे डाल आये।"

लडकी ने जवाव दिया, "मै तो उसे कचरा समझकर ही उठा लाई थी। समझती थी कि वह कचरा गलत जगह पर पडा है, इसीलिए आपने उसे उठाने के लिए कहा है। मैं उसे कचरे के स्थान पर डाल आई।"

गाधीजी ने पूछा, "यदि वहा पैसा पडा होता तो क्या उसे भी उठाकर तू कचरे मे डाल आती?"

लडकी ने उत्तर दिया, "नही।"

गाधीजी वोले, "वह भी पैसा ही था। असली धन क्या है, तुम्हे आश्रम मे रहकर यह पहचानना आना चाहिए। जिसने उस पूनी के टुकडे को पूरा काते बिना छोडा, उसने तो धन फेका ही, मैने तुमसे उठाने को कहा तब भी तुम उस धन को नही पहचान सकी। अब जाओ, उसे लेकर आओ।"

लज्जित स्वर मे लडकी ने कहा, "बापू, मेरी गलती हुई। मै आपकी वात पूरी तरह नही समझ सकी। अव मै उस टुकडे को स्वय ही कात लूगी। आप उसके लिए न ठहरे।"

लेकिन गाधीजी कब माननेवाले थे! वह तो उस टुकडे को

स्वय कातने को व्यग्र थे। आग्रहपूर्वक बोले, "उसे ढूढकर लाओ। मै कैसे विश्वास करू कि आगे और गफलत न होगी। परिश्रम से धन वनता है और धन वनने पर उसका सदुपयोग करना हमारा कर्त्तव्य है।"

वह लडकी वहुत लज्जित हुई। तुरन्त जाकर कचरे मे से उसने उस पूनी के टुकडे को खोज निकाला। उसपर मिट्टी और घास के टुकडे लिपटे हुए थे। वह कुछ फैल-सी भी गई थी। इसके बावजूद गाधीजी ने उसको पूरी तरह से कातने के काम में लिया। उससे जो धागा कता वह रग मे मैला था, लेकिन गाधीजी ने इस बात की तनिक भी चिन्ता न करते हुए कहा, "बुनने के बाद जव कपडा धुलेगा, तब यह मिट्टी भी उसमे से दूर हो जायगी।"

: १२ ·

मैंने तो उससे अच्छी भारत-माता नहीं देखी

साप्ताहिक 'नवजीवन' के लिए गाधीजी को भारतमाता की एक ऐसे चित्र की आवश्यकता थी, जिसमे उसकी सच्ची झलक मिल सके। उनके आदेश पर सुपरिचित चित्रकार श्री रविशकर रावल ने एक चित्र तैयार किया। जिस समय वह उस चित्र को लेकर गाधीजी के पास आये, सयोग से श्री हरिप्रसाद देसाई वही पर बैठे हुए थे। रावलजी ने वह चित्र उन्हे भी दिखाया, फिर उसे वह गाधीजी के पास ले गये।

गाधीजी को वह चित्र अच्छा लगा। उन्होने निश्चय किया कि उसे अगले अक मे ही प्रकाशित किया जाय। यह सुनकर देसाई बडे अप्रसन्न हुए। बोले, "आपने इस चित्र को पसन्द कर लिया। इसमे भारतमाता का राजमुकुट कहा है ? भले ही वह धूल मे रोद दिया गया हो, लेकिन वह होना तो चाहिए। इसके बाल भी रूखे है और कपडे भी इतने गन्दे है। यह तो मुझे भारत-माता नही, कोई भिखारिन मालूम होती है। रविशकरजी जैसे चित्रकार को क्या कहू और आपको भी क्या कहू !"

गाधीजी चुपचाप सुनते रहे। रविशकरजी तो ऐसे खडे थे जैसे अदालत के कटघरे मे गुनहगार खडा रहता है। देसाई की बात समाप्त होने पर गाधीजी ने दृढता से उत्तर दिया, "मै तो सारे हिन्दुस्तान मे घूमा हू, रविभाई ने जो चित्र बनाया है, मैंने तो उससे अच्छी भारत-माता कही भी नही देखी।"

: १३ :

अपना मैल छुड़ाकर पड़ोसी को नहीं दिया जा सकता

उन दिनो गाधीजी बबई मे श्री रेवाशकर के पास ठहरे हुए थे। उस समय बम्बई के उपनगरो की काग्रेस कमेटी के प्रधान श्री विट्ठलभाई पटेल थे और एक उप-मत्री थे श्री जयसुखलाल मेहता। मेहतासाहब साताक्रूज काग्रेस कमेटी के प्रमुख भी थे।

गाधीजी की इच्छा थी कि विदेशी कपडो की होली जलाने

का कार्यक्रम साताक्रूज से आरम्भ किया जाय। उनके दूसरे कार्य-क्रमो से लोगो का इतना मतभेद नही था, जितना विदेशी कपड़ो के जलाने से। श्री विट्ठलभाई पटेल और श्री जयसुखलाल मेहता ये दोनो भी इस सबध मे गाधीजी से सहमत नही थे। उनका विचार था कि प्रथम महायुद्ध के कारण टर्की आदि देशो में कपड़े की बहुत कमी हो गई है, तब विदेशी कपडा जलाने के स्थान पर ऐसे देशो को क्यो न भेज दिया जाय ?

इसी समय गाधीजी का आदेश मिला कि उनका विचार कपडे जलाने का यज्ञ साताक्रूज से आरम्भ करने का है। अब तो वे लोग धर्मसकट मे पड गये। विट्ठलभाई पटेल ने श्री मेहता से कहा, "आप महात्माजी के पास जाकर उन्हे समझा आइये।"

श्री मेहता ने उत्तर दिया, "महात्माजी एक बार निश्चय कर लेने के बाद फिर उसे बदलते नही।"

फिर भी वह गाधीजी के पास गये। दो घटे तक बाते होती रही। अत मे गाधीजी ने कहा, "अपना मैल छुडाकर पडोसी को नही दिया जा सकता। हम यह यज्ञ साताक्रूज से ही आरम्भ करेगे।"

उसी रात को ८ बजे गाधीजी ने स्वय अपने हाथो से साताक्रूज मे विलायती कपडे की होली जलाई।

और ज्यादा ताकत की इच्छा क्यों करते हो ?

बहुत पहले गाधीजी ने कच्चा अनाज खाने का प्रयोग किया था। और व्यक्तियो के साथ श्री रविशकर व्यास ने भी उसमे भाग लिया था। गाधीजी पेट मे दर्द होने के कारण बहुत दुवले हो गये, लेकिन श्री व्यास को कोई विशेप कष्ट नही हुआ।

एक महीना वाद गाधीजी की यह स्थिति हो गई कि बोलने भी उन्हे कष्ट होने लगा, लेकिन श्री व्यास जव उनके पास गये तो डाक्टर की आज्ञा का उल्लघन करते हुए उन्होने पूछा, "तुम्हारा शरीर कैसा है ?"

व्यासजी ने उत्तर दिया, "ठीक है।"

गाधीजी ने पूछा, "वजन कितना कम हुआ ?"

व्यासजी ने उत्तर दिया, "ज्यादा नही, तीन पाव ही कम हुआ, परन्तु कमजोरी बहुत मालूम होती है।"

गाधीजी ने पूछा, "काम क्या करते हो ?"

व्यासजी ने कहा, "सारे दिन सूत कातता रहता हू। किसी दिन सफाई आदि का काम होता है तो वह भी कर लिया करता हू।"

गाधीजी ने फिर पूछा, "इतना सव काम कर लेते हो ?"

व्यासजी ने कहा, "जीहा।"

इस पर गाधीजी वोले, "तब और ज्यादा ताकत की इच्छा

क्यो करते हो ? जरूरत से ज्यादा ताकत शरीर मे विकार उत्पन्न करती है और आत्मशक्ति का ह्रास करती है। दक्षिण अफ्रीका में इक्कीस मील पैदल चलकर मै वकालत करने जाता था। शनिवार को तो बाईस मील पैदल चलता था। बडे सवेरे उठकर रात की बनाई हुई रोटिया और नीबू का आचार साथ मे बाध लेता था। रास्ते मे जो झरना पडता था उसमे स्नान करके दफ्तर पहुचता और खाना खाकर काम मे लग जाता। शनिवार को छोडकर और दिन शाम के समय गाडी मे लौटता, इसलिए शरीर से जितने काम की जरूरत होती है उतनी ही ताकत की इच्छा होनी चाहिए।"

: १५ :

एक घण्टे अच्छी नींद आई

श्री थम्बी नायडू गाधीजी के दक्षिण अफ्रीका के साथी थे। उन्होने अपने लडके गाधीजी को सौंप दिये थे। उन्हीमे से एक लडका मरण-शैया पर पडा हुआ था। दवाए कर-करके वेचारा घवरा गया था। आश्रम मे वह इसलिए आया था कि मौत आवे तो यही आवे।

वारी-वारी से सभी आश्रमवासी उसकी देखभाल करते थे। उन्हीमे गाधीजी भी एक थे। अपनी वारी के अतिरिक्त जब कभी विशेष देखभाल की आवश्यकता होती तब भी उन्हे हाजिर होना पडता था।

एक रात की बात है। बारह बजे उनकी बारी समाप्त हुई। उसके बाद श्री फडके की बारी थी। गाधीजी ने उनसे कहा, "मुझे एक घटे के बाद जगा देना।"

बीमार के पास बैठने से तो नीद आने का डर था। इसलिए श्री फडके इधर-उधर घूमने लगे। १५ मिनट बाद, गाधीजी के बिस्तर के पास जाकर उन्होने पाया कि वह गहरी नीद मे सोये हुए है। बीमार की इतनी अधिक चिन्ता और इतनी गहरी नीद ! श्री फडके आश्चर्य से चकित हो उठे।

धीरे-धीरे एक घटा बीत गया। श्री फडके गाधीजी को उठाने जा रहे थे कि एक मिनट पहले ही उन्होने पूछ लिया, "क्यो, वक्त पूरा हो गया न ?"

श्री फडके को और भी आश्चर्य हुआ। गाधीजी बोले, "एक घटे अच्छी नीद आई।"

और वह बीमार के पास जा बैठे। आध घटे बाद बीमार ने उन्हीकी गोद मे सिर रखकर प्राण छोडे। उस समय उन्होने किसीको भी नही जगाया।

: १६ :

ओह, मेरे अज्ञान का भी कुछ पार है

उन दिनो गाधीजी कोचरब वाले आश्रम मे रहते थे। गर्मी के दिन थे, दोपहर का समय। जैन विद्वान सुखलालजी उनसे मिलने के लिए आए। उस समय वहा दीनबन्धु एन्ड्रयूज आदि

और कई व्यक्ति थे। पडित सुखलालजी के साथ भी कई मित्र थे। बातों-ही-बातो मे गाधीजी ने पडितजी से पूछा, "कहां से आ रहे हो ?"

पडितजी ने जवाब दिया, "पाटण से।"

गाधीजी ने पूछा, "पाटण तो सिद्धपुर के पहले आता है न ?"

पडितजी ने जवाब दिया, "नही, पाटण मुख्य लाइन पर नही है। मेत्राणा से जाने वाली ब्राच लाइन पर है।"

गहरे अचरज में डूब कर गांधीजी बोले, "ऐसा ?"

फिर कई क्षण तक वह जैसे मथन कर रहे हों, मौन ही रहे। फिर बोले, "ओह, मेरे अज्ञान का भी कुछ पार है !"

उसके बाद उन्होने उस प्रदेश का नक्शा निकाला और सब रेलवे लाइन देख डाली।

: १७ :

तुम्हारा अन्दाज ठीक है

गाधीजी बैठे हुए है। आस-पास और भी नेता बैठे है। गम्भीर मत्रणा चल रही है कि एक छोटी-सी काली चीटी बापू के पेट दिखाई देती है। बाबू जगजीवनराम उसे देखते है। वह ऊपर की ओर चढ़ती चली जाती है। फिर घूम कर पीछे जाती है। फिर ऊपर गले के पास आ जाती है। बाबू जगजीवनराम देख रहे है। उनके मन के भीतर एक जिज्ञासा जाग आई है।

देखे, बापू की अहिसा की कसौटी क्या है? वे इस चीटी के साथ अब क्या करते है? इसीलिए वह चीटी की ओर से अपनी दृष्टि नही हटा पाते।

लेकिन बापू क्या बिलकुल अनभिज्ञ है? वह सबकुछ देख रहे है। यह भी देख रहे है कि बाबू जगजीवनराम की दृष्टि चीटी पर से हटाये नही हटती और उनके अन्तर मे एक प्रश्न कौंध रहा है। वह धीरे-से अपना हाथ हटाते है और गले पर रेगती हुई चीटी को और भी धीरे-से हटा देते है। तभी सहसा जगजीवनराम उनकी ओर देखते है। वह भी देखते है। दृष्टि मिलती है। जगजीवनराम अपने प्रश्न का उत्तर पाकर मुस्करा देते है और गाधीजी हस पडते है।

यह हसी बाबू राजेन्द्रप्रसाद का ध्यान आकर्षित करती है। वह पूछते है, "क्या बात है?"

गाधीजी बाबू जगजीवनराम की ओर इशारा करते हुए कहते है, "इनसे पूछो।"

जगजीवनराम चीटी की कहानी बताकर कहते है, "मुझे ऐसा लगता था कि बापू के मन मे सघर्ष चल रहा है कि चीटी को हटाऊ या नही। उसको अपने शरीर पर से हटा देने की क्रिया से उसे कष्ट पहुचेगा। क्या वह हिसा नही मानी जायगी?"

यह सुनकर गाधीजी बडे जोर से हसे, "हा-हा, तुम्हारा अदाज ठीक ही है।"

दूरबीन को समुद्र में फेंक दिया जाय

गाधीजी के जर्मन मित्र कैलनबैक को दूरवीनो का बहुत शौक था। दो-तीन बहुमूल्य दूरवीने वह सदा अपने पास रखते थे। इस वात को लेकर गांधीजी से उनकी रोज ही वहस होती थी। गांधीजी उन्हे यह समझाने का प्रयत्न करते थे कि इस प्रकार वहुमूल्य वस्तुओ को अपने पास रखना हमारे आदर्श के, विशेपकर उस सादा जीवन के, जिसका हमने व्रत लिया है, बिल्कुल अनुकूल नही है।

एक वार दोनों समुद्र से यात्रा कर रहे थे। सहसा इस विषय को लेकर फिर गरमा-गरम वहस हो उठी। उस समय वे दोनों केविन की खिडकी के पास खडे हुए थे। सहसा गाधीजी ने कहा, "आपके और मेरे वीच इस प्रकार झगडे हो, इससे तो यही अच्छा है कि दूरवीन को समुद्र में फेक दिया जाय और फिर कभी इसकी चर्चा न की जाय।"

श्री कैलनबैक ने तुरन्त उत्तर दिया, "जरूर इस झगड़े की जड को फेक ही दीजिए।"

जैसे उनको परख रहे हो, गाधीजी ने फिर कहा, "देखो, मै फेके देता हू।"

कैनलबैक ने उसी दृढता से उत्तर दिया, "मै सच कहता हूं, फेक दीजिए।"

और गाधीजी ने दूरवीन फेक दी। उस समय उसका मूल्य

सात पौण्ड था। परन्तु उसका मूल्य उसके दामो मे नही, बल्कि श्री कैलनबैक के उसके प्रति जो मोह था, उसमे था। फिर भी उन्होने इस बात के लिए अपने मन को कभी दुखी नही होने दिया।

: १९ :

गांधी के पास किसी को चंगा करने की करामात नहीं

खादी-प्रचार के सबध मे भ्रमण करते हुए गाधीजी ढाका गये थे। एक दिन सध्या के समय क्या हुआ कि एक ७५ साल का बूढा उनके सामने आकर खडा हो गया। वह तीस-चालीस मील से चल कर आया था और उनके दर्शनो के लिए बहुत व्याकुल हो रहा था। सामने आते ही उसने कहा, "मेरे सिर पर हाथ रख दीजिये।"

यह सोचकर कि वह जल्दी चला जायगा, गाधीजी ने उसके सिर पर हाथ रख दिया, लेकिन वह तो भावावेश मे आ गया। चरणो मे लोट-लोटकर रोने लगा। सब विस्मित-विमूढ से खडे थे। कोई समझ नही पा रहा था कि बात क्या है। उस वृद्ध के गले मे गाधीजी और बा की तस्वीर लटक रही थी। हृदय का तूफान निकल जाने पर जब वह शान्त हुआ तो बोला, "मै नाम-शूद्र हू। मुझ पर आपकी कैसी कृपा है। दस साल पहले मेरे पैर रह गये थे। कितनी दवाइया की, परन्तु बिछौने से उठ न सका।

भगवान से मौत के लिए प्रार्थना करता रहता था। फिर आपका नाम लेने लगा। अब देखिये, चलने-फिरने लगा हूं। कोई दवा-दारू नही की। बस, आपका नाम लिया है।"

इतना कह कर वह फिर पैरों मे लोट-पोट होने लगा। उसे मना करते हुए गाधीजी वोले, "भाई, भगवान का भजन करो। उसी ने तुम्हे चगा किया है। गाधी के पास किसी को चगा करने की करामात नही है।"

: २० :

ये सब मेरे प्रयोग हैं

एक सज्जन ने एक वार गांधीजी से पूछा, "बहुत से व्यक्तियो का यह विचार है कि आपका यह आश्रम नाना प्रकार के मनुष्यो के नमूनो का अजायबघर अथवा पागलखाना है। इस वारे मे आपका क्या विचार है ?"

गांधीजी वोले, "इस पागलखाने का सरदार कौन है ? मैं या दूसरा कोई और ? तुम्ही वनाओ। सेवाग्राम आश्रम मे सयाने लोग कितने है ?"

उन सज्जन ने उत्तर दिया, "जितने विवाहित है, जैसे महादेवभाई, किशोरलालभाई, नरहरिभाई और वा।"

गाधीजी वोले, "अच्छा, यही सही। लेकिन इन सवका सरदार तो मैं ही हू न ? तव मैं सयानो का सरदार भी हुआ। हुआ न ? मुझे तो ये उपाधियां समान रूप से प्रिय है।"

सहसा वह गभीर हो उठे। वोले, "तुम्हारी वात सच है। यह आश्रम पागलो की प्रयोगशाला के रूप मे पहचाना जाय तो इसमे छोटेपन का अनुभव नही होना चाहिए। सचमुच मै यहा भाति-भाति के प्रयोग करके जीवन के सत्यो को परखता हू। तुमने जिन तरह-तरह के नमूनो की वात कही है उनके साथ मुझे दिन-रात अपने मन और मस्तिष्क को ठडा रख कर व्यवहार करना पडता है। गम खाना होता है। ये सव मेरे प्रयोग ही तो है।"

: २१ :

दांत कुएं में फेंक दिया था न

उस दिन गाधीजी दातो के डाक्टर के यहा अपना एक दात निकलवाने के लिए गये। सुप्रसिद्ध लेखक श्री जैनेन्द्र कुमार और अन्य कई व्यक्ति उनके साथ थे। इधर गाधीजी कुर्सी पर वैठे, उधर एक मित्र ने जैनेन्द्रजी से कहा, "ऐसा न हो जैनेन्द्र, कि दात डाक्टर के पास ही रह जाय?"

जैनेन्द्रजी वोले, "हा, डाक्टर उसे रखना तो चाह सकते है।"

मित्र ने कहा, "यही तो। लेकिन दात उनके पास जाना नही चाहिए।"

जैनेन्द्रजी स्वय भी उसके महत्व को जानते थे। वह सावधान हो गये और जैसे ही दात खीचकर वाहर आया कि उन्होने आगे वढकर डाक्टर से कहा, "लाइये, इसे मै धो दू।"

अब वह दात उनके कब्जे में था। धो-पोछ कर उन्होने उसे रुई मे लपेटा और जेब में डाल लिया। अगले दिन एक और मित्र ने पूछा, "वह दात क्या आपके पास है ?"

जैनेन्द्रजी बोले, "जीहा, वह सर्वथा सुरक्षित है। भय की कोई बात नही है।"

लेकिन भय तो था। गाधीजी ऐतिहासिक थे। इसलिए उनका दात भी ऐतिहासिक था। सो धीरे-धीरे अनेक मित्र उसको अपने अधिकार में लेने को उत्सुक हो उठे, लेकिन जैनेन्द्रजी थे कि सुनकर भी नही सुनते थे और समझकर भी नही समझते थे। हर बार विश्वास दिला देते कि वह दात सुरक्षित है। किसीके लिए चिन्ता का विषय नही है, लेकिन एक दिन बातों-ही-बातों में स्वय गाधीजी पूछ बैठे, "जैनेन्द्र, वह दांत तुम्हारे पास है ?"

जैनेन्द्रजी ने उत्तर दिया, "जी, है तो।"

गाधीजी ने पूछा, "अभी है ?"

जैनेन्द्रजी ने उत्तर दिया, "जीहा, है। आप क्या कीजियेगा ?"

गाधीजी बोले, "क्या करूगा ? वापस मुह में तो लगा नही पाऊगा, लेकिन फिर भी भई, है तो वह मेरा न ? मुझे दे दो।"

अब जैनेन्द्रजी कैसे मना करते ! चुपचाप जेब से बाहर निकाल कर उनके आगे कर दिया और उन्होने अपने एक अत्यन्त विश्वस्त व्यक्ति को बुलाकर वह दात उसे सौप दिया। कहा, "देखो, किसी गहरे कुए में इसे डाल आओ।"

उस व्यक्ति ने निश्चय ही वह दात किसी गहरे कुए में डाल

दिया होगा, लेकिन गाधीजी इस प्रकार ग्रासानी से ग्राश्वस्त होने वाले नही थे। उससे पूछा, "वह दात कुए में फेंक दिया था न ?"

उस व्यक्ति ने उत्तर दिया, "जीहा।"

गाधीजी बोले, "गहरे कुए मे फेका है न ?"

उस व्यक्ति ने कहा, "जीहा।"

गाधीजी फिर वोले, "ठीक याद है ? फेक दिया था ?"

उस व्यक्ति ने विश्वास के स्वर मे कहा, "जीहा।"

ग्रब गाधीजी ने गहरी सास ली।

: २२ :

तब तो नौकर तुमसे बढ़ गये

जुहू से विदा होकर जब गाधीजी पूना पहुचे तो पता चला कि पेट ग्रौर सिर पर प्रतिदिन गीली मिट्टी की जो पट्टिया चढती थी वे पीछे वही छूट गई है। तुरन्त शान्तिकुमार को पत्र लिखा कि पट्टिया भेज दे।

पत्र पाकर शान्तिकुमारजी ने इधर-उधर पूछताछ की, पर वे पट्टिया नही मिली। इसलिए उन्होने खादी की नई पट्टिया बनवाकर उन्हे भेज दी। गाधीजी का उत्तर ग्राया, "मुझे नई पट्टियो की जरूरत नही थी, पुरानी पट्टिया ही भेजो।"

वेचारे शान्तिकुमार पुरानी पट्टिया कहा से लाते ! नौकरो ने वहुत पहले ही उन्हे चीथडे समझकर फेक दिया था ग्रौर

गांधीजी थे कि फटे हुए कपड़ो में से काटकर पट्टियां बनवा लेते थे।

जब यह समाचार गांधीजी को मिला और शान्तिकुमार से उनकी भेंट हुई तो उन्होंने अच्छा-खासा भाषण दे डाला। उन्होंने कहा, "नई खादी की पट्टियां बनवा कर क्यों भेजीं? यह क्यों मान लिया कि पुरानी पट्टियां फेंक ही देनी थीं। तुम्हें किफायतशारी की बात किस तरह समझाऊं?"

शान्तिकुमार ने अपना बचाव करते हुए उत्तर दिया, "बापूजी, मैंने नहीं फेंकी, नौकरों ने ही फेंक दी थीं।"

गांधीजी बोले, "तब तो नौकर तुमसे बढ़ गये!"

: २३ :

रात को नींद तो ठीक आई न

श्री ग० वा० मावलकर, जो बाद में लोकसभा के अध्यक्ष के रूप में प्रसिद्ध हुए, एक बार कस्तूरबा ट्रस्ट की बैठक में भाग लेने लिए सपत्नीक सेवाग्राम गये। एक कुटिया में उनके रहने का प्रबन्ध किया गया। उन्हें मधुमेह की बीमारी थी। भोजन में वह दूध अधिक लेते थे। गांधीजी इस बात को जानते थे।

सेवाग्राम में गाय का दूध होता था और वह प्रत्येक व्यक्ति को एक निश्चित मात्रा में मिलता था, लेकिन मावलकरजी का स्वास्थ्य खराब है, उन्हें अधिक दूध की आवश्यकता होगी, इस कारण गांधीजी ने गोशाला के व्यवस्थापक को बुलाकर कहा,

"देखो, भाई मावलकर और उनकी पत्नी कल यहा आ रहे है। स्वास्थ्य ठीक न होने के कारण उन्हे अधिक दूध की आवश्यकता है, इसलिए सबको एक निश्चित मात्रा मे दूध देने का नियम उनके लिए लागू न कर बैठना। उनकी पत्नी से पूछ लेना कि वह नित्य कितना दूध लेते है ? उतना ही उन्हे देना। दही, छाछ आदि की व्यवस्था भी कर देना और हा, वह क्या शाक-सब्जी लेते है, यह सब भी मालूम कर लेना। फिर उसी के अनुसार प्रबन्ध कर देना।"

गाधीजी यही पर नही रुके। उन्होने व्यवस्थापक से कहा, "यहा मच्छर बहुत होते है, इसलिए भाई मावलकर और उनकी पत्नी के लिए मच्छरदानी की व्यवस्था करना न भूल जाना।"

एक रात उस कुटिया मे बिताने के बाद दूसरे दिन सवेरे जब मावलकरजी गाधीजी से मिलने के लिए गये तो उनका पहला प्रश्न यही था, "कहो, रात को नीद तो ठीक आई न ? मच्छरो का कष्ट तो नही हुआ ? व्यवस्थापक ने तुम्हे मच्छरदानी दी थी या नही ?"

२४

यह सामूहिक मृत्यु का आनन्द है

अहमदाबाद मे गाधीजी का आश्रम साबरमती नदी के तट पर था। १९२३ की वर्षा ऋतु मे इतने जोर का पानी पडा कि

नदी मे भयानक बाढ आ गई। आश्रम के निचले भाग मे पानी भर गया। वहा पर जो पशु बधते थे, उन्हे ऊचे स्थान पर ले जाना पडा, लेकिन नदी का पानी तो किलोले मारता हुआ ऊचा, और ऊचा, चढता आ रहा था।

शहर से सरदार वल्लभभाई पटेल का सदेशा आया कि आश्रम खाली कर दिया जाय और सब लोग शहर चले आवे। इसके लिए सवारी का प्रबन्ध किया जा रहा है।

यह सदेशा पाकर गाधीजी चिन्तामग्न हो गये। उन्होने सभी आश्रमवासियो को तुरन्त प्रार्थनास्थल मे इकट्ठे होने के लिए आदेश दिया। नदी का पानी आश्रम के मार्गो पर लहराता हुआ बढता चला आ रहा था। चारो ओर काल भगवान का रुद्र रूप उपस्थित हो गया था।

सब लोग आ गये तब गाधीजी बोले, "भगवान कालरूप मे दर्शन देने के लिए आए है। मैं इनकी लपलपाती जीभ में एक क्षण मे समा जाने की तैयारी कर रहा हू। आश्रम खाली करके अहमदाबाद शहर जाने का निमन्त्रण भी आ गया है। कोई जाना चाहता है ? मै तो आश्रम के पशुओ को छोड़कर शहर मे जाने की इच्छा नही रखता।"

उन दिनों बम्बई के एक वृद्ध खोजा गृहस्थ आश्रम में आये थे। गाधीजी ने उनसे शहर मे जाने का आग्रह किया, लेकिन गाधीजी को अकेला छोड़ जाने से उन्होने स्पष्ट इकार कर दिया। उस समय प्रार्थना-स्थल मे नदी का पानी किल्लोल करता हुआ बढा जा रहा था। एक भाई ने गाधीजी से पूछा, "मृत्यु के सन्मुख आ जाने पर भी यह कैसा आनन्द है ?"

गाधीजी ने तुरन्त उत्तर दिया, "यह सामूहिक मृत्यु का आनन्द है।"

: २५ :

सभी की ज़िम्मेदारी मुझपर है

आश्रम-जीवन के प्रयोग गाधीजी दक्षिण अफ्रीका से ही करते आ रहे थे। वहा भी उनके परिवार के अतिरिक्त और भी बहुत से व्यक्ति आश्रम मे रहते थे। उनमे कुछ ऐसे लडके भी थे, जो जरूरत से ज्यादा शरारती और आवारा थे। गाधीजी के अपने बेटो को उन्ही के साथ रहना पडता था। किसी के साथ किसी प्रकार का कोई भेदभाव नही किया जाता था।

लेकिन कैलनबैक को भले और बुरे लडको का इस प्रकार एक साथ रहना बिलकुल अच्छा नही लगता था। एक दिन साहस करके उन्होने गाधीजी से कहा, "मुझे यह सब अच्छा नही लगता। आपके बेटे इन लडको के साथ रहेगे तो परिणाम अच्छा नही होगा। इन आवारा लडको की सोहबत से वे भी बिगड जायगे।"

गाधीजी ने उत्तर दिया, "अपने बेटो और इन लडको मे मै भेदभाव कैसे कर सकता हू ? सभी की जिम्मेदारी मुझपर है। मेरे बुलाने पर ही तो वे यहा आए है। यदि मै इन्हे रुपये दे दू तो ये आज ही जोहानिसबर्ग जाकर पहले की तरह रहने लगेगे। आश्चर्य नही कि इनके माता-पिता यह समझते हो कि इन लडको

ने यहा आकर मुझ पर मेहरबानी की है। आप और मै इस बात को बहुत अच्छी तरह जानते है कि यहा इन लड़को को असुविधा होती है। मेरे लड़के और वे सब एक साथ ही रहेगे। मेरे लडको को यह अनुभव क्यो हो कि वे औरो से ऊचे दर्जे के है। उनके दिमाग मे ऐसे विचार डालना उनको उलटे रास्ते पर ले जाना है। इस स्थिति मे रहने से उनका जीवन बनेगा ही, बिगड़ेगा नही। वे भले-बुरे की परीक्षा करना सीखेगे।"

: २६ :

तुम्हें आगे के लिए चेत जाना चाहिए

नोआखाली-प्रवास के समय गाधीजी ने अपनी पोती मनु के लिए एक कार्यकर्त्ता से पजाबी पोशाक तैयार करा देने के लिए कहा था। एक दिन वही कार्यकर्त्ता सध्या के समय उन कपड़ों को लेकर आ गये, लेकिन उन्होने पैसा लेने से इकार कर दिया। गाधीजी के भक्त थे और मनु उनकी पोती थी। इसी खयाल से वह दाम नही लेना चाहते थे।

गाधीजी ने पूछा, "तुम यह पैसा कहां से दोगे? तुम्हारे पास जो कुछ है, वह तो सार्वजनिक है। भले मै ही क्यो न होऊ, मेरी जरूरतो के लिए भी तुम एक पाई इस प्रकार खर्च नही कर सकते और फिर इस लड़की के पिता तो इतना खर्च कर सकते है। एक जन-सेवक को सार्वजनिक धन का उपयोग कैसे और कहा किया जाय, इसका पूरा ध्यान रखना चाहिए। आज तो

तुमने मनु के लिए ऐसा किया है, कल को अपने सबधियो के लिए भी ऐसा नही करोगे, इस बात का क्या भरोसा है? देखो, तुम पर मुझको बिलकुल शका नही है, क्योकि मैं तुम्हे अच्छी तरह जानता हूं। उस प्रेम के कारण ही मैने यह सबकुछ कहा है, पर तुम्हे आगे के लिए चेत जाना चाहिए।"

: २७ :

मेरा हक सबसे अधिक है

गाधीजी मनुष्य थे, लेकिन इतिहास-पुरुष भी थे। इसलिए उनके आसपास जो कुछ था, उसका ऐतिहासिक मूल्य था। उनके शरीर के बालो का, दातो का, उनके उपयोग मे आने वाली अनेक वस्तुओ का, सभी का ऐतिहासिक मूल्य था। इसीलिए उन वस्तुओ की माग रहती थी। एक दिन देवदासभाई ने देखा कि महादेवभाई के पास गाधीजी का एक दात है। वह बोले, "यह दात मुझे दे दो।"

महादेवभाई ने कहा, "क्यो दू ?"

देवदासभाई ने पुत्र के अधिकार से कहा, "इसपर मेरा हक है। इसलिए दो।"

दोनो मे काफी बहस हो गई। सयोग से गाधीजी उधर से आ निकले। बोले, "क्या बात है ? यह तकरार कैसी है ?"

महादेवभाई ने कहा, "मेरे पास आपका एक दांत है। उसे मैंने सहेज कर रखा है। देवदास उसे मागता है। कहता है, इस

पर मेरा हक है।"

गांधीजी बोले, "हक की ही वात हो तो महादेव का ही हक अधिक माना जायगा, लेकिन वैसे मेरा हक सबसे अधिक है। इसलिए लाओ, मुझे दो।"

महादेवभाई कैसे इकार करते ! वह दात लेकर गाधीजी ने स्वय ऐसे स्थान पर फेक दिया, जहां से उसका उद्धार होना सभव नही था।

: २८ :

उस कुटिया के पीछे रख आओ

शाम की प्रार्थना के वाद एक दिन गाधीजी बैठे हुए इधर-उधर की बाते कर रहे थे। रात कितनी वीत गई, बातो-ही-बातो में इसका किसीने ख्याल ही नही किया। बहुत देर के बाद गाधीजी उठने को हुए। वह अभी लेटने की स्थिति मे ही थे कि उन्होने पाया कि उनकी चादर पर एक साप पडा हुआ है। आधे मिनट तक वह मौन रहे, फिर बोले, "दो आदमी यहा आओ और धीरे से इस चादर को उठा कर उस कुटिया के पीछे रख आओ।"

सुनकर लोगो को आश्चर्य हुआ, पर वे नही जानते थे कि वात क्या है ? वे चादर ले गये और उसे रख देने पर हो वे उस साप को देख सके। कुछ क्षण तक वह साप वैसे ही पड़ा रहा, फिर धीरे-धीरे ऐसे चला गया, मानो कुछ हुआ ही न हो।

: २९

मेरा इतना सूत रखा है उससे बनवालो

एक बार सेठ जमनालाल बजाज की पुत्री मदालसाबहन सेवाग्राम गई तो उन्होने बा से कहा, "खादी भडार मे कुछ साडिया आई है, आप उन्हे देख ले।"

बा ने सदा की भाति गाधीजी से पूछा, "एक साडी ले ले क्या ?"

गाधीजी ने कहा, "साडी चाहिए क्या ?"

बा ने जवाब दिया, "हा।"

गाधीजी बोले, "मेरा इतना सूत रखा है, उससे बनवा लो।"

बा को यह अच्छा नही लगा। उद्विग्न होकर बोली, "सूत मेरा भी रखा है।"

अब बा साडी कैसे ले सकती थी, लेकिन मदालसा का मन रखने के लिए उन्हे खादी भण्डार तो जाना ही था। वह वहा गई। मदालसा ने जबरदस्ती उन्हे एक बिस्तरबन्द सिलवा दिया। वापस सेवाग्राम लौटकर बा ने वह बिस्तरबन्द गाधीजी को दिखाया। बोली, "यह बिस्तरबन्द मदालसा ने जबरदस्ती सिला दिया है।"

गाधीजी ने पूछा, "तुम्हे चाहिए क्या ?"

बा ने उत्तर दिया, "नही।"

वह बिस्तरबन्द तुरन्त वापस लौटा दिया गया।

विदेशी भाषा में बोलें तो वह राष्ट्रभाषा सम्मेलन कैसा

सन् १९१७ मे राष्ट्रीय कांग्रेस का वार्षिक अधिवेशन कलकत्ता में हुआ था। उसीके साथ हुआ था राष्ट्रभाषा सम्मेलन। लोकमान्य वाल गगाधर तिलक इसके सभापति थे। काग्रेस और बगाल के सभी नेता इसमे भाग लेने के लिए आये। लेकिन वे सब बोले अग्रेजी मे। सरोजिनी नायडू भी अग्रेजी में ही बोली, यहां तक कि सभापति का भाषण भी अग्रेजी मे ही हुआ। लेकिन जब गाधीजी बोलने के लिए खडे हुए तो जैसी हिन्दी वह उन दिनो जानते थे, उसीमें वोले। उन्होने कहा, "लोकमान्य हमारे सबसे बडे नेता है। वह चाहे जो करे, वह महत्व का है। परन्तु राष्ट्रभापा का सभापति यदि विदेशी भाषा मे बोले तो वह राष्ट्रभाषा सम्मेलन कैसा ?"

लोकमान्य ने उत्तर दिया, "आप ठीक कहते है, पर मेरी तो लाचारी है। मै जरा भी हिन्दी नही जानता।"

वडी विनम्रता से गाधीजी ने कहा, "आप मराठी जानते है, सस्कृत जानते है। ये हमारे देश की भाषाए है और ये सरोजिनी देवी तो बहुत अच्छी उर्दू जानती है। यह भी क्या अग्रेजी मे ही वोल सकती है ?"

उस क्षण के बाद हवा ही वदल गई। एक व्यक्ति भी अग्रेजी में नही बोला। सध्या के समय लोकमान्य एक सार्वजनिक

सभा मे भाषण देने के लिए गये। हिन्दी मे बोलते हुए उन्होने कहा, "आज मै पहले-पहल हिन्दी मे बोल रहा हू। मेरी भाषा सबधी कितनी गलतिया होगी, यह मै नही जानता, पर मै मानता हू कि हमारी राष्ट्रभाषा हिन्दी है और हमे इसमे ही अपना काम करना चाहिए।"

: ३१ :

मतभेद रहें तो सहन कीजिये और क्षमा दीजिये

उन दिनो देश में साम्प्रदायिकता की आधी जोर से चल रही थी। स्थान-स्थान पर हिन्दू-मुस्लिम दगे हो रहे थे। गाधीजी ने उसी समय 'यग इण्डिया' मे एक लम्बा लेख लिखा। शीर्षक था—"हिन्दू-मुस्लिम-तनाजा उसके कारण और उपाय।" उस लेख मे उन्होने आर्यसमाज, सत्यार्थप्रकाश, स्वामी दयानन्द और शुद्धि के सबध मे भी अपने विचार प्रकट किये थे। दिल्ली के डा० युद्धवीर सिह गाधीजी के परम भक्त थे। मगर वह आर्य-समाजी भी थे। अब भी है। इसलिए आर्यसमाज के सबध मे गाधीजी ने जो कुछ लिखा, उससे वह व्याकुल हो उठे। उन्होने तुरन्त गाधीजी को एक लम्बा पत्र लिखा। उसमे अपने हृदय का दु ख उडेलते हुए गाधीजी ने जो आक्षेप किये थे, उनका उत्तर दिया। आवेश के कारण उस पत्र मे कडवाहट भी भर गई।

एक सप्ताह के भीतर चार पैसे के सरकारी लिफाफे मे

वन्द पीले कागज पर पेंसिल से लिखा उनका उत्तर डाक्टर-साहब को मिला। गांधीजी ने लिखा था

भाई युद्धवीर सिह जी,

आपका पत्र मिला। ऋषि दयानन्द की शिक्षा से बहुतो का भला हुआ है—उसका मै थोडा इकार करता हू। मैने तो त्रुटिया बताई है, वह भी मित्रभाव से कि जिससे समाज की प्रवृत्ति और भी लाभदायी बने और उसका जो अश हानिकारक है उसको दुरुस्त किया जाय।

'सत्यार्थ प्रकाश' पर आर्यो का बहुत भाव होने के कारण मैने उसको 'आर्यो का बाइबल' कहा। मै ज्यादा नही लिखता, क्योकि मैने जो कुछ आगामी 'यग इण्डिया' के लिए लिखा है, उस पर से बहुत कुछ साफ हो जायगा। यदि उसके बाद भी कुछ शक रहे तो अवश्य मुझको दुबारा लिखना और हमारे मे मतभेद कायम रहे तो सहन कीजिये और क्षमा दीजिये।

आपका,

मोहनदास गाधी

: ३२ :

यह तकवा घिसने के लिए है

एक बार एक बडे भारतीय अधिकारी अपने परिवार और मित्रो के साथ गाधीजी से मिलने के लिए सेवाग्राम की ओर चले। मार्ग मे उनकी मोटर बिगड गई। सेवाग्राम बहुत दूर नही रह

गया था, इसलिए वे सब कार को वही छोडकर पैदल ही सेवाग्राम पहुचे। गाधीजी से मिलते ही उन अधिकारी बन्धु ने क्षमा मागते हुए कहा, "मार्ग मे मोटर बिगड जाने के कारण हम निश्चित समय पर नही पहुच पाये।"

गाधीजी ने पूछा, "मोटर को क्या हो गया था ? क्यो रुक गई ?"

अधिकारी बोले, "मशीन मे जग लग गई है, उसे छुडाने के लिए रेगमाल की जरूरत थी। ड्राइवर के पास वह था नही और इस जगल के बीच कहा मिलता ? इसलिए हम पैदल चल कर आये।"

गाधीजी ने तुरन्त अपनी छोटी-सी मेज मे से रेगमाल का एक छोटा-सा टुकडा निकाला और उन अधिकारी महोदय को दे दिया। आश्चर्यचकित उन सज्जन ने पूछा, "आप यह रेगमाल यहा किसलिए रखते है ?"

गाधीजी ने उत्तर दिया, "यह तकवा घिसने के लिए है।"

भेट करने के पश्चात जब वह अधिकारी महोदय बाहर आये तो उन्होने अपने मित्र से कहा, "मै रेगमाल के इस टुकडे का उपयोग नही करूगा। महात्माजी के साथ अपनी भेट की स्मृति मे इसे सदा सभाल कर रखूगा और अपने वशजो के लिए विरासत मे छोड जाऊगा।"

तुम्हारी तो मातृभाषा हिन्दी है

साबरमती आश्रम मे एक विद्यालय था। शिक्षा का माध्यम गुजराती था। अधिकतर विद्यार्थी गुजराती थे। केवल दो महाराष्ट्रीय और एक उत्तर भारतीय, ये तीन गुजराती भाषाभाषी नही थे।

उस विद्यालय मे गाधीजी एक दिन तुलसीकृत रामायण और एक दिन जान बनियन की 'पिलग्रिम्स प्रोग्रेस' पढाया करते थे। उनका यह नियम था कि अगला पाठ पढाने से पहले वह पिछले पाठ का अर्थ यहां-वहा से पूछ लेते थे, इसलिए सारे विद्यार्थी पिछला पाठ याद करके आते थे। उस दिन उन्हे रामायण पढानी थी। वह आये, पिछले पाठ का एक दोहा उन्होने पढा और कहा, "इसका अर्थ बताओ।"

पहले दो लडके उसका अर्थ नही बता सके। तीसरे नम्बर पर थे मार्तण्ड उपाध्याय। गांधीजी ने पूछा, "मार्तण्ड, तुम बताओ इसका क्या अर्थ है ?"

अर्थ मार्तण्ड को भी नही आता था। वह समझे बैठे थे कि यह कक्षा तो अहिन्दी-भापियो के लिए है, उनसे कुछ नही पूछा जायगा। लेकिन गाधीजी क्या मानने वाले थे! अपना प्रश्न उन्होने फिर दोहराया, "बताओ इस दोहे का क्या अर्थ है ?"

मार्तण्ड जितना कुछ जानते थे, बता दिया। लेकिन गांधीजी उस उत्तर से सतुष्ट नही हुए। उन्होने दूसरे, तीसरे, फिर चौथे

विद्यार्थी से पूछा। एक ने सही अर्थ बता दिया। गाधीजी बडे प्रसन्न हुए और मार्तण्ड की ओर घूम कर बोले, "मार्तण्ड, तुम्हारी तो मातृभापा हिन्दी है और तुम्हे इस दोहे का अर्थ ठीक से नही आया।"

इतने विद्यार्थियो के सामने गाधीजी ने जो उलहना दिया तो विद्यार्थी मार्तण्ड को रोना आ गया। वह सहम गये। आखो से टपटप आसू गिरने लगे। गाधीजी बोले, "रोने से क्या होगा? मेहनत करके पाठ याद किया करो। यह मानकर मत चलो कि हिन्दी भापी को हिन्दी के पाठ याद करने की जरूरत नही।"

. ३४ :

मैं लाश को आपके सुपुर्द कैसे करूं ?

आगा खा महल मे अचानक महादेव देसाई की मृत्यु हो गई। प्रश्न उठा कि उनका अन्तिम सस्कार कहा और कैसे किया जाय?

सरकार के आदेश लेकर जब मेजर भडारी लौटे तो उनका चेहरा सूखा हुआ था। गाधीजी ने पुछवाया, "वल्लभभाई आते है क्या?"

उत्तर मिला, "वह यहा नही है।"

गाधीजी ने पुछवाया, "वह नही आ सकते?"

भडारी गाधीजी के सामने आने से बचना चाहते थे। अपने आगे उन्होने सरोजिनी नायडू को कर लिया था। बापू

ने जब उनसे पूछा, "आप क्या खबर लाये है?" वह हिचकिचाते हुए बोले, "मैने सब इतजाम कर लिया है।"

बापू ने पूछा, "क्या इंतजाम कर लिया है ? क्या मै शव को मित्रो के हवाले कर सकता हू ?"

इस प्रश्न का उत्तर दिया सरोजिनी नायडू ने। वह बोली, "सरकार शव किसी को नही देना चाहती। भडारी स्वय घाट पर जाकर जला आयेगे।"

गाधीजी ने पूछा, "क्या हममे से कोई शव के साथ जा सकता है ?"

उत्तर मिला, "नही।"

बापू ने पूछा, "क्या मै यहा अपने सामने शव को जलवा सकता हू ? मै लाश को आपके सुपुर्द कैसे करूं ? क्या कोई पिता अपने पुत्र की लाश अजनबी आदमियो के हाथ सौप सकता है ?"

इस प्रश्न का कोई उत्तर भडारी के पास नही था। इसलिए बम्बई सरकार से सलाह करने के लिए वह फिर ऊपर गये। दर्द-भरे स्वर मे गाधीजी बोले, "श्रद्धानन्दजी के कातिल की लाश फांसी के बाद जनता को दे दी गई थी। लोगो ने उसको शहीद बनाया। उसका जलूस निकाला। उस कारण हिन्दू-मुस्लिम झगडा हो सकता था। मगर सरकार ने परवा नही की। आज वह महादेव का शव नही देने देती। मै सोच रहा हूं कि क्या मुझे इस प्रश्न पर लड़ लेना होगा ? या कडवी घूट पीकर रह रह जाना होगा ? मै इस बात पर अड सकता हू। मगर वह महादेव की मृत्यु को राजनैतिक रग देकर उससे फायदा उठाने

सी बात हो जायगी। पिता अपने पुत्र की मृत्यु का उपयोग से कैसे कर सकता है?"

गाधीजी का यह आत्म-मंथन देखकर सब लोग बहुत डर हे थे। यदि सरकार ने उनकी यह बात भी स्वीकार नही की ो वह उपवास कर सकते है। इसलिए उन लोगो ने भंडारी से ाग्रह किया कि वह सरकार को पूरी स्थिति से अवगत करा दे ौर शव को यहा जला दे।

थोडी देर बाद भडारी लौट आए। बड़ी कठिनता से वह ाव को वहा जलाने की आज्ञा प्राप्त कर सके थे।

३५ :

राज के मालिक नहीं ट्रस्टी बनिये

एक बार गाधीजी पचगनी मे ठहरे हुए थे। जयपुर के महाराजा वहा आए। एक दिन टहलने के समय वह भी साथ ही लिये। सरोजिनी नायडू ने गांधीजी के साथ उनका परिचय कराते हुए कहा, "हाल ही मे महाराजा ने सर मिर्जा इस्माइल के समान एक उदार विचार वाले मुत्सद्दी को अपनी रियासत का दीवान बनाया है।"

गांधीजी ने उत्तर दिया, "यह तो अच्छी बात है, लेकिन अपने को राज्य का मालिक समझकर नही, बल्कि ट्रस्टी समझ कर राज्य चलाइये।"

इसी प्रकार बात करते हुए वह आगे बढ गये। शान्ति-

कुमार और डा० सुशीला नैयर पीछे रह गये। तभी धीमे स्वर में सुशीलाबहन ने शान्तिकुमार से पूछा, "आप रसोई में क्या-क्या बनाना जानते है ?"

शान्तिकुमार ने उत्तर दिया, "रोटी बेलना छोडकर सभी कुछ जानता हूं।"

एकाएक जयपुर के महाराजा से बात करते हुए गांधीजी पीछे की ओर मुडे और बोले, "दक्षिण अफ्रीका मे मै भी रोटी बेलना नही जानता था। वाद मे मैने युक्तिपूर्वक एक तरकीब खोज निकाली। जिस तरह बेलना जानता था उसी तरह बेल कर उसे कटोरे की कोर से दबा देता था और इस तरह रोटी गोल बन जाती थी।"

: ३६ :

हरेक से सीखने की शक्ति रख

आगाखा महल मे जब गाधीजी घूमने के लिए निकलते थे तो डा० सुशीला नैयर भी उनके साथ रहती थी। अक्सर वह अपने हाथ मे कैंची रखती। गाधीजी का आदेश था कि फूल कैंची से ही काटने चाहिए। उन्हे मरोड कर तोडने मे हिसा और जगलीपन है। इसीलिए वह कैंची अपने पास रखती थी। लेकिन कई बार ऐसा होता कि वह उससे हाथ के नाखून भी काटने लगती। एक दिन गाधीजी बोले, "यह तो व्यर्थ की हर-कत है या तुझे सचमुच ही नाखून काटने की जरूरत है ?"

सुशीला नैयर ने उत्तर दिया, "जरूरत तो नही है।"

गाधीजी वोले, "तो इसको मै सहन नही करूगा।"

सुशीला नैयर ने नाखून काटना बद कर दिया, लेकिन वह ो उनका स्वभाव वन चुका था। कुछ देर वाद वह फिर यत्रवत ाखून काटने लगी। तुरन्त याद आया कि गाधीजी ने मना कया है। वह रुक गई, लेकिन गाधीजी तो देख चुके थे। बोले, 'मेरी आख बहुत-सी चीजे देख लेती है। मगर मै हमेशा टोकता ाही हू। अगर मै ऐसा करू तो तेरा और मेरा दोनो का खात्मा ो जायगा।"

सुशीला नैयर ने उत्तर दिया, "आपने आज जिस प्रकार कहा है, वैसे कहे तो घवराहट नही होती, मगर जव आप चिढ जाते है तो मै परेशान हो उठती हू। मेरी ग्रहण-शक्ति कुठित हो जाती है। गुस्से मे मैं कुछ सीख नही सकती। मै हर किसी । भी नही सीख सकती।"

गाधीजी बोले, "यह तो वच्चो की-सी बात हुई। उन्हे रिझाकर सिखाना होता है। तू कवतक बच्ची वनी रहेगी ? कान पकडकर तुझे क्यो नही वताया जा सकता ? अगर तू इस चीज को अपना गुण मानती है तो यह तेरी भूल है। मै चाहता हू कि हरेक से सीखने की शक्ति रख। दत्तात्रेय के चौबीस गुरु थे। उन्होने पवन, पानी, वृक्ष आदि हरेक गुरु से कुछ-न-कुछ सीख लिया था।"

सब मुझसे पूछा जायगा, सीखा न जायगा

एक बार की वात है। गाधीजी बैठे थे कि मीराबहन साग-भाजी की डलिया लेकर ग्रा पहुची। ताजी साग-भाजी किसी फार्म से ग्राई थी। जैसे ही डलिया उनके सामने रखी गई, उनकी त्यौरी चढ गई। वोले, "यह क्या है ?"

मीराबहन ने उत्तर दिया, "देखकर वता दीजिए, क्या बनेगा ?"

गांधीजी बोले, "सब मुझसे पूछा जायगा, सीखा न जायगा ? वक्त फालतू है मेरे पास ?"

यह कह रहे थे, पर साथ ही टोकरी को टटोल भी रहे थे। पालक का पत्ता उठाया, उसे वीच में से मोडा। हल्की-सी चटख के साथ वह टूट गया। दूसरा उठाया। उसे भी मोडा। फिर वोले, "ऐसे जो टूट जाय, वह ठीक है। जो मुड जाय उसे रहने देना। इतना तुम्हे जानना चाहिए। इसकी यही पहचान है ग्रौर योही मेरे पास न ग्रा धमका करो।"

मीराबहन पसीना-पसीना हो गई, लेकिन वह कुछ कह न सकी, क्योकि सुनने वाला सुनने को तैयार नही था। वह चुप-चाप चली गई।

तुमने अपराध किया है

जिस समय हरिजन कार्य के लिए गाधीजी उडीसा के कुछ भागो का दौरा कर रहे थे, उस समय उनकी टोली के साथ लगभग १८ वर्ष की उम्र का एक जर्मन युवक भी था। गाधीजी ने उसे अपने साथ चलने की इजाजत दे रखी थी। वह अपने जीवन-मार्ग के सम्बन्ध मे जानकारी प्राप्त करने के हरेक इच्छुक को ऐसी आज्ञा दे देते थे। यह युवक स्वयसेवक का काम करता था और प्रायः सभी के लिए उपयोगी साबित हो रहा था। समय-समय पर वह लम्बे-लम्बे पत्र और लेख आदि जर्मनी भी भेजा करता था।

उस यात्रा के दौरान गाधीजी ने यह सकल्प किया था कि वह या उनके दल का कोई व्यक्ति राजनैतिक भाषण नही देगा। सयोग से एक स्थान पर काफी दिन रुकना पडा। यहा उस जर्मन युवक ने स्थानीय विद्यार्थियो की एक बडी सभा मे भाषण दिया। इस भाषण मे उसने भारत मे ब्रिटिश शासन-प्रणाली के भीतर की बुराइयो और सुनी हुई दमन की अनेक कहानियो का वर्णन किया। अगले ही दिन उस जिले के ब्रिटिश अधिकारी ने एक पत्र लिख कर उस युवक को चेतावनी दी कि यदि भविष्य मे वह इस प्रकार की किसी सभा मे भाग लेगा तो उसे वह प्रान्त छोडकर जाना पडेगा।

यह पत्र पाकर वह युवक वहुत प्रसन्न हुआ और उसे लेकर

गांधीजी के पास पहुचा। उसे देखते ही गांधीजी बहुत क्रुद्ध हुए और उस युवक से बोले, "तुमने अपराध किया है। मेरा सकल्प तुम्हे मालूम है। फिर भी तुम मेरी ही टोली मे से एक होकर ऐसी बात कर बैठे !"

उन्होने उस युवक को आदेश दिया कि वह उस अफसर को पत्र लिखकर क्षमा याचना करे और पत्र डाक में डालने से पूर्व उन्हे दिखा ले। लेकिन उस युवक को उस बात का तनिक भी दुःख नही था। बडे गर्व के साथ उसने तर्क उपस्थित किया, "सभा में मै बोला था, आप नही। मैने अपने भाषण में जो कुछ कहा, वह सही है।"

गांधीजी ने उत्तर दिया, "यह सब सही हो सकता है, लेकिन इस बात का वह अफसर, सिवा इसके कि हमारे द्वारा विश्वास भग किया गया है, और क्या अर्थ लगा सकता है ? यदि तुम पश्चात्ताप-पूर्ण पत्र लिखकर क्षमा-याचना नही करना चाहते हो तो तुम्हे तुरन्त हमारी टोली से अलग हो जाना चाहिए।"

इसके बाद उन्होने स्वय घटना के अनुरूप एक पत्र तैयार कर दिया। लेकिन वह युवक भी कम हठी नही था। उसने उस पत्र पर हस्ताक्षर करने से इकार कर दिया। आखिर गाधीजी ने उसे उस पत्र के साथ अगाथा हेरिसन के पास भेज दिया। कई घटे तक समझाने के बाद ही वह युवक उस पत्र पर हस्ताक्षर कर सका। उसे गाधीजी के साथ रहना जो था।

: ३९ ·

मैं इसे तबतक नहीं देख सकता

चम्पारन मे नील वागान के स्वामियो के विरुद्ध किसानो की शिकायतो की गाधीजी वडी तत्परता से जाच कर रहे थे। उस जाच ने जैसे विहार मे नया जीवन फूक दिया था। बहुत से सरकारी नौकर भी ऐसा सोचने लगे थे कि गाधीजी की सहायता करना उनका कर्त्तव्य है। उनमे से कुछ ऐसे भी थे, जो सरकारी गुप्त दस्तावेज तक उनके साथियो के पास भेज देते थे। स्वाभाविक रूप से वह दस्तावेज उनके काम की दृष्टि से वडे कीमती होते थे।

इसी प्रकार का एक दस्तावेज एक वार उनके हाथ लगा। वह उन्होने गाधीजी को ले जाकर दे दिया। लेकिन गाधीजी ने उसे खोलने से इकार कर दिया। वोले, "मै इसे तवतक नही देख सकता जवतक मुझे यह विश्वास नही दिला दिया जाता कि वह वैध उपायो से प्राप्त किया गया है।"

· ४० ·

मुझपर अपनी डाक्टरी का प्रयोग करना चाहते हैं

गोलमेज परिपद् के अवसर पर अपने लन्दन-प्रवास मे गाधीजी वहां की 'सोसाइटी आफ फ्रेड्स' की प्रार्थना सभा मे

गये। उन सभा मे क्वेकर्स और दूसरे लोग बडी सख्या मे उपस्थित थे। वे प्रार्थना में एकाग्रचित्त हो ही रहे थे कि इतने में गाधीजी को खासी का जबर्दस्त दौरा पडा। सभी लोगो को बडी बेचैनी हुई, लेकिन उस समय प्रभु से प्रार्थना करने के अतिरिक्त वे और कुछ भी कर सकने मे असमर्थ थे। कुछ देर बाद गाधीजी स्वय स्वस्थ हो गये और शेष समय प्रार्थना मे बीता।

वहां से वह अपने दफ्तर लौट गये। उस समय डा० एस० के० दत्त ने होरेस अलैक्जेन्डर से कहा, "गाधीजी को बुरी तरह से सर्दी हो गई है। उसमें जरा भी सुधार नही दीखता। मेरे विचार से वह किसी डाक्टर की मार्फत अपने स्वास्थ्य की जांच करावें या कम-से-कम स्वय कोई उचित उपचार कर अपने काम का बोझ अवश्य हलका कर दें।"

: ४१ :

सहयोगियों से कुछ नहीं छिपाया जा सकता

जिस समय गाधीजी ने चम्पारन मे जाच का काम आरम्भ किया तो नील बागान के स्वामियो मे स्वाभाविक रूप से बडी खलबली मच गई। वे उनके खिलाफ सरकार के पास झूठ-सच खबरे भेजने लगे। एक अग्रेज मजिस्ट्रेट गाधीजी के साथ उनके सिद्धान्तो को लेकर बडे प्रेम के साथ विचार-विनिमय किया करता था। वह भी उनके विरुद्ध सरकार के पास सनसनीखेज समाचार भेजने लगा। अपनी एक रिपोर्ट मे उसने लिखा कि गाधीजी की उपस्थिति के कारण यहा का सारा वातावरण कानून के प्रति अवज्ञा की वृत्ति से भर गया है। प्रान्त के कुछ भागो मे ब्रिटिश शासन का लोप हो गया है। जनता गाधीजी को एक ऐसे व्यक्ति के रूप मे देखने लगी है, जिनके पास सरकार के विरुद्ध शिकायत की जा सके।

उसने इस रिपोर्ट की एक प्रतिलिपि गाधीजी के पास भी भेजी और उन्हे सूचित किया कि वह उनकी सम्मति के साथ ही सरकार के पास भेजी जायगी। उसने यह भी लिखा कि गाधीजी इस पत्र को गुप्त समझे।

लेकिन गाधीजी तो अपने साथियो से कोई बात कभी नही छिपाते थे। उन्होने वह पत्र भी सभी को दिखा दिया और मजिस्ट्रेट को लिख दिया कि वह 'गुप्त' का यही अर्थ लगाते है कि

उस पत्र को प्रकाशित न किया जाय। वह अपने सहयोगियो से कुछ भी छिपा कर नही रख सकते। उनकी सलाह और सहायता के बिना कुछ भी कर सकना उनके लिए असम्भव है।

उनके सहयोगियो को ऐसा लिखना अच्छा नही लगा। उन्हे डर था कि यदि मजिस्ट्रेट ने गाधीजी को ऐसी सूचनाए देना वन्द कर दिया तो उन्हे स्थानीय अधिकारियो के वीच चलने वाली वातचीत का कुछ भी पता नही लगेगा। इसलिए उन्होने गाधीजी से कहा, "हम इन वातो को जानना नही चाहते। आप इन पर विचार करके जिस निर्णय पर पहुचेंगे उसी मे सतोष मान लेगे।"

गाधीजी वोले, 'आप जव सवकुछ पढ चुके है तो मजिस्ट्रेट को इस गलतफहमी मे रखना कि 'किसी ने उसे नही देखा' अनुचित है।"

: ४२ :

आज ढाले गये आंसुओं से कुछ सांत्वना मिली

चम्पारन, फिर खेडा सत्याग्रह, उसके वाद सैन्य भर्ती के सिलसिले मे गाधीजी निरन्तर वहुत व्यस्त रहे। परिणाम यह हुआ कि वह वीमार पड गये। उस समय वह अहमदावाद मे थे। शहर के एक वडे मकान में वह टिके हुए थे, लेकिन वहां उन्हे विलकुल चैन नही पड़ रहा था। वह वरावर कह रहे थे कि उन्हे

साबरमती आश्रम ले जाया जाय, लेकिन वहा तो अभी इने-गिने कमरे ही तैयार हो पाये थे। यद्यपि वह किसी भी प्रकार की औपधि का सेवन नही करते थे, फिर भी अन्य साधनो की सुलभता के कारण उनका शहर मे रहना सुविधाजनक था। इसलिए उनके मित्र उन्हे यही सलाह दे रहे थे।

लेकिन एक दिन दोपहर को वह अपनी बात पर अड गये। उन्हे तेज बुखार चढा हुआ था, पर वह किसीकी भी नही सुन रहे थे। इसलिए उन्हे आश्रम ले जाना पडा। उन दिनो बाबू राजेन्द्र प्रसाद उन्हे देखने के लिए आए हुए थे। आश्रम पहुचने के दूसरे दिन ही उन्हे वापस लौटना था। विदा लेने के लिए वह गाधीजी के पास गये। कई क्षण गाधीजी मौन रहे। फिर बोले, "बुरी तरह ज्वरग्रस्त होते हुए भी आश्रम आने की बात पर मै केवल इसीलिए अडा रहा हू कि उस महल मे मुझे बिलकुल चैन नही पड रहा था। मैने कई काम उठाये, किन्तु एक भी अपने मन के माफिक पूरा नही कर सका। इतना बडा महल मेरे अनुरूप कैसे हो सकता है? अहमदाबाद के मिल-मजदूरो मे मैने काम शुरू किया, लेकिन वह थोडा आगे बढ ही पाया था कि इसी बीच एक-दूसरे काम में हाथ डालना पडा। फिर आश्रम चलाने का विचार किया कि चम्पारन से बुलावा आ गया। सोचता था कि वहा का काम जल्दी खत्म हो जाय। आश्रम के उद्घाटन के लिए ठीक समय पर लौट आऊगा, किन्तु वहा कई महीने रुकना पडा, जिससे यह इच्छा भी पूरी नही हुई। चम्पारन की रैयत को राहत दिलाने मे कुछ कामयाबी तो जरूरत मिली, लेकिन वह नाकाफी थी। बीच ही मे खेडा जाना पडा। फिर

रंगरूट-भर्ती के काम मे हाथ डालना पडा और अब तो बीमार ही पड गया हू। अब कोई नया काम कहां तक उठा सकूगा, इसमें भी मुझे सदेह है। सारी उम्र नित नये-नये काम उठाने और उन्हे अधूरे छोड देने में वीती और अब कूच करने का वक्त आ गया है, किन्तु यदि ईश्वर की यही इच्छा है तो निरुपाय हू।"

इतना कह कर वह एक वच्चे की भाति रोने लगे। उस समय जो व्यक्ति वहां उपस्थित थे वे इतने किकर्त्तव्यविमूढ हो उठे कि उनके मुह से सवेदना का एक शव्द भी नही फूटा। लेकिन शीघ्र ही गाधीजी स्वय शान्त हो गये और वोले, "इतने दिन मेरा दम घुटता रहा, लेकिन आज ढाले गये इन आंसुओ से कुछ सात्वना मिली।"

उसके बाद वह स्वस्थ होकर सहज भाव से दूसरी बातों की चर्चा करने लगे।

: ४३ :

इस पैंसिल जैसा बीच का

गाधीजी से मिलने के लिए वहुधा विदेशी सम्वाददाता आया करते थे। एक वार सेवाग्राम मे एक अमरीकी सम्वाद-दाता दोपहर के बाद उनसे भेट करने के लिए आया। वह उसे वुलाने ही वाले थे कि खेतो के भीतर से दौडता हुआ एक व्यक्ति वहा आया और वोला, "आर्यनायकमजी का लडका मृत्युशैया पर है।"

सभी व्यक्ति ठगे-से उस आदमी को देखते रह गये। अभी आध घण्टा पहले तो वह बालक बडे मजे से यहा खेल रहा था। इसीलिए किसी को भी इस समाचार पर भरोसा नही हुआ। परन्तु गाधीजी तुरन्त दौडते हुए खेतो के उस पार जा पहुचे और बच्चे की मा को सात्वना देने लगे। बच्चा सज्ञाहीन था, जैसे गहरी निद्रा मे सोया हो और वह निद्रा कभी टूटने वाली न हो। वह बच्चा बोतल भर कुनेन की मीठी गोलिया खा गया था और उसे जहर चढ गया था। सभी व्यक्ति शोक से विमूढ-से हो रहे थे। गाधीजी समझ गये कि खेल खत्म हो चुका है। वह वापस लौट आए। वह उस अमरीकी सम्वाददाता से प्रतीक्षा करने को कह गये थे। लौटकर उन्होने उसे बुला भेजा और सहजभाव से उसके प्रश्नो के उत्तर देने लगे। इतना ही नही, उस शोकाकुल वातावरण में वह हसना भी नही भूले। अत मे उस सवाददाता ने उनसे पूछा, "आपका स्वास्थ्य कैसा है?"

गाधीजी के हाथ मे एक पेसिल थी, जिस पर अग्रेजी मे 'मिडलिग' शब्द अकित था। उसी की ओर इशारा करते हुए वह तुरन्त बोले, "इस पैसिल जैसा बीच का।"

कस्तूरबा ट्रस्ट का कार्यालय ऐसे महल में शोभा नहीं देता

श्री शान्तिकुमार बम्बई-स्थित अपना सिंधिया हाऊस गांधीजी को दिखाने के लिए बहुत उत्सुक थे। जब कस्तूरबा ट्रस्ट का कार्यालय सिंधिया हाउस में था तब एक दिन वहां ट्रस्ट की बैठक इसी उद्देश्य से बुलाई गई। गांधीजी उन दिनों बंबई में बिरला हाउस में ठहरे हुए थे। कार्यक्रम बहुत ही निजी और गुप्त रखा गया था, फिर भी गांधीजी के आगमन के समय आसपास के कार्यालयो के बहुत से लोग वहां इकट्ठे हो गये। जिस कमरे मे बैठक हो रही थी वह वातानुकूलित था। गांधीजी को ठण्ड लगने लगी, यहां तक कि उन्हे शाल ओढ़नी पडी।

बैठक के बाद वह ऊपर की मंजिल पर कस्तूरबा ट्रस्ट का कार्यालय देखने के लिए गये। सबकुछ देखने के बाद उन्होने ठक्करबापा से कहा, "कस्तूरबा ट्रस्ट का कार्यालय ऐसे महल में शोभा नही देता। इसे खाली करो और सेवाग्राम चले जाओ।"

छोटी-छोटी बातों से उद्विग्न क्यों होना चाहिए ?

आगाखा महल मे महादेवभाई की मृत्यु के बाद गाधीजी प्रतिदिन सध्या के समय समाधि-स्थल पर जाया करते थे। समाधि को सजाने के लिए डा० सुशीला नैयर, फूल ले जाती थी। एक दिन ऐसा हुआ कि वह फूल इकट्ठे कर रही थी तो गाधीजी समाधि के लिए चल पडे। सुशीलाबहन ने उन्हे जाते नही देखा। गाधीजी को समाधि पर पहुच कर थोडी देर उनकी राह देखनी पडी। मीराबहन को यह सब अच्छा नही लगा। वह नाराज हो उठी और सुशीलाबहन से बोली, "क्यो इतने फूल लाती हो ? बापू का भी समय जाता है।"

सुशीलाबहन जैसे बेचैन हो गई। उन्हे भी क्रोध आ गया। बोल उठी, "मै अब फूल इकट्ठे नही किया करूगी।"

गाधीजी सबकुछ देख रहे थे और सुन रहे थे, परन्तु उस समय वह कुछ नही बोले। दूसरे दिन सवेरे जब वह समाधि-स्थान से वापस लौट रहे थे तो एकाएक बातो का प्रसग बदलते हुए उन्होने सुशीलाबहन से कहा, "मैं तेरे साथ मीराबहन की बात करना चाहता हू। कल फूलो की बात पर तू इतनी घबरा क्यो गई थी ? यहा तक कहने लगी कि मै अब फूल इकट्ठे नही किया करूगी। ऐसा क्यो ? जो हमारा धर्म है, उससे क्यो चूके, भले ही कोई कुछ भी कहे।"

सुशीलाबहन ने उत्तर दिया, "इसमें धर्म की बात नही है। फूल ले जाकर हम मरने वाले की तो सेवा करते नही। अपने सन्तोप के लिए ही ले जाते है। मीराबहन नाराज हुई तो मैने सोचा, मै अब नही लाऊगी।"

गाधीजी बोले, "हा, किन्तु यदि फूल चढाकर हम कुछ प्रेरणा लेते है, हमारी निष्ठा को कुछ शक्ति मिलती है तो वह ठीक है। अगर ऐसा नही है तो फिजूल है, लेकिन मै तो यह कहना चाहता हू कि छोटी-छोटी बातो से उद्विग्न क्यो होना चाहिए ? इतनी जिज्ञासा भी क्यो रखनी चाहिए कि हमारे बारे मे किसी ने क्या कहा था ? हम उसी हद तक जानने की इच्छा रखे, जहा तक हमारे आत्म-सुधार के लिए आवश्यक है।"

: ४६ :

मेरे लिए आदर प्रकट करने का यह गलत तरीका है

श्री गणेश वासुदेव मावलंकर, जो वाद में स्वतन्त्र भारत की लोकसभा के अध्यक्ष हुए, सत्याग्रह के प्रारम्भिक दिनो में गाधीजी के असहयोग प्रस्ताव से पूर्णतया सहमत नही थे। इस-लिए जब कलकत्ता-अधिवेशन से लौटकर श्री वल्लभभाई पटेल ने यह प्रश्न अहमदाबाद म्युनिसिपेलिटी मे उपस्थित किया तो वह उलझन मे पड़ गये। दो शिक्षको ने नोटिस दिया था। अगर

म्युनिसिपेलिटी असहयोग नही करती तो वह इस्तीफा दे देंगे। इस पर वल्लभभाई पटेल ने प्रस्ताव पेश किया कि उन दोनो के इस्तीफे मजूर कर लिये जाय। मावलकरजी ने इसमे एक सशोधन सुझाया कि इस बारे मे मतदाताओ को विश्वास मे लेना चाहिए और इसलिए इस प्रस्ताव पर एक महीने बाद विचार करना चाहिए।

सर्वसम्मति से यह सशोधन पास हो गया। अब प्रश्न यह था कि मतदाता मावलकरजी का साथ नही देते तो क्या उन्हे अपने पद से त्यागपत्र दे देना चाहिए? उन्होने ऐसा ही करने का निश्चय किया। वह असहयोग करने के विरोध मे थे। उन्होने मतदाताओ के लिए असहयोग के अनुकूल और प्रतिकूल दोनो तरह से एक-एक वक्तव्य तैयार किया और हरेक के पास वह वक्तव्य, उत्तर के लिए मतपत्र और पते सहित लिफाफा भेजने का निश्चय किया।

गाधीजी उस समय अहमदाबाद मे ही थे। उनको दिखाने के लिए यह वक्तव्य लेकर वह उनके पास गये। गाधीजी ने उसे ध्यानपूर्वक पढा। बोले, "मावलकर, तुमने यह बहुत लम्बा वक्तव्य लिखा है।"

मावलकरजी ने उत्तर दिया, "बापू, सब समझ जाय, इसलिए यह जरूरी था और फिर थोडे से शब्दो मे बडी बात कह डालने वाली लेखन-कला मुझमे नही है।"

बहुत देर तक वह उस प्रश्न को लेकर विचार-विनिमय करते रहे। खुले दिल से बीच-बीच में हँसी-मजाक करते हुए बातें हुई, लेकिन वह मावलकरजी को अपनी बात नही समझा सके।

मावलकरजी ने कहा, "बापू, मेरे मन में आपके लिए आदर है। विचारो मे ही हमारा मतभेद है, फिर भी ऐसा लगता है कि शायद मेरे विचारों में ही भूल हो। इसलिए मै आपसे सहमत होने का विचार कर रहा हू।"

गाधीजी हॅस पडे। बोले, "मेरे लिए आदर है, इसलिए सहमत होना चाहते हो! मेरे लिए आदर प्रकट करने का यह बहुत गलत तरीका है। तुम्हारा कर्त्तव्य है कि तुम जो कुछ ठीक समझते हो उसे खुले मन से व्यक्त करो। मेरी गलती नजर आये तो आलोचना करो, जिससे मै अपनी भूल समझ सकू। मेरा आदर व्यक्त करने का तो यही सही तरीका है।"

यह कहते हुए वह बहुत गभीर हो गये, लेकिन शायद माव-लकरजी को यह बडा कठिन मालूम हो रहा था। गाधीजी ने कहा, "कठिन तो नही मालूम होना चाहिए। तुम निर्भय होकर अपना यही वक्तव्य छपवा दो। यह ठीक ही है। मेरे जो विचार दिये है, वे भी ठीक है।"

यह सुनकर मावलकरजी को बडा सन्तोष हुआ। वह विदा लेकर जाने के लिए उठे, लेकिन दरवाजे तक पहुचे भी नही थे कि गाधीजी ने बुलाकर कहा, "मावलकर, जरा अपना वक्तव्य दिखाना तो। मुझे लगता है कि मेरे विचारो के विरोध में और तुम्हारे विचारो के अनुकूल कुछ और बाते लिखी जा सकती है।"

यह कहते हुए उन्होने स्वय अपने हाथ से उस वक्तव्य में अपने ही विरुद्ध दो-तीन बाते और जोड दी।

. ४७

नहीं, ये तो आम जनता के पैसों के कोयले हैं

सुप्रसिद्ध यरवदा-उपवास के बाद जेल के द्वार हरिजन सेवको के लिए खोल दिये गए थे। गुजरात और काठियावाड मे होने वाले हरिजनोद्धार के कार्यक्रम के बारे मे बातचीत करने और सलाह लेने के लिए सर्वश्री नानाभाई भट्ट और परीक्षतलाल मजूमदार उसी समय वहा आए। गाधीजी अभी आम के पेड के नीचे ही लेटे हुए थे। वही वे लोग भी बैठ गये। बाते होने लगी। जेल के एक अफसर भी पास ही बैठे थे। अगीठी पर एक कैदी गाधीजी के लिए पानी गर्म कर रहा था।

पानी अच्छी तरह गर्म हो गया। कैदी ने अगीठी पर से बर्तन उतार कर नीचे रख दिया। कोयले उसी तरह दहकते रहे। गाधीजी ने उस ओर देखा। बातचीत बीच ही मे रोककर उन्होने कैदी से कहा, "अगीठी बुझा दो, भाई।"

जेल अफसर मुस्कराकर बोले, "कोयले तो सरकारी है, आप इतनी फिक्र क्यो कर रहे है?"

गाधीजी ने उत्तर दिया, "नही, ये तो आम जनता के पैसो के कोयले है।"

उनकी आंख चली गई तो मेरी भी गई समझो

श्री विट्ठल लक्ष्मण फडके (मामा साहब फडके) की एक आख मे बहुत तकलीफ थी। आपरेशन के लिए उन्हे बम्बई के एक अस्पताल मे जाना पडा। गाधीजी तभी अस्वस्थता के कारण आगाखा महल से मुक्त हुए थे। इसलिए वह स्वय नही आ सकते थे, लेकिन उनकी ओर से कोई-न-कोई व्यक्ति प्रति-दिन समाचार जानने के लिए जाता था।

पंचगनी से लौटकर जब गाधीजी श्री जिन्ना से मिलने के लिए बम्बई आए तब भी मामासाहब अस्पताल मे ही थे। इसी अवधि मे 'चर्खा-दिवस' पडा। उस दिन बिरला हाउस मे उनके मित्रो और प्रशसको ने एक छोटा-सा उत्सव मनाया। गाधीजी ने डा० सुशीला नैयर को यह जानने के लिए अस्पताल भेजा कि क्या कुछ देर के लिए मामासाहब भी उस उत्सव मे सम्मिलित हो सकते है? परन्तु डाक्टर ने आज्ञा देने मे अपनी अस-मर्थता प्रकट की। मामासाहब नही जा सके, लेकिन उनके स्थान पर उनकी देखभाल करने वाला एक हरिजन युवक वहां गया।

तीन घटे बाद जब वह वापस लौटा तो श्री अमृतलाल ठक्कर का एक पत्र लाया था। उसमें लिखा था, "बापू किसी डाक्टर से तुम्हारी आंखों के बारे में बात कर रहे थे। कहते थे अगर उनकी (मामा साहब की) आख चली गई तो मेरी भी

गई समझो।”

चिट्ठी पढते ही मामासाहव की ग्राखो से अश्रुधारा बह चली।

: ४६ .

मैं सुबह तक ऐसा ही खड़ा रहूंगा

उस वर्ष स्वर्गीय रायचन्द की जयन्ती अहमदाबाद के प्रेमाभाई हाल मे मनाई गई थी। हाल बहुत छोटा था और दर्शक बहुत थे।

सभा का कार्य आरम्भ हुआ, लेकिन शीघ्र ही सब व्यवस्था विगड गई। श्रोताओ के बैठने के लिए जगह तक नही थी। नये आने वाले व्यक्ति आगे आने के लिए धक्का-मुक्की करने लगे। फिर तो इतना शोर हुआ कि किसी को कुछ सुनाई देने का प्रश्न ही नही था। नेतागण मच पर से शान्त रहने के लिए प्रार्थना करते-करते थक गये, लेकिन शोर शान्त नही हुआ। तव सहसा गाधीजी उठे और जनता का ध्यान अपनी ओर आकर्पित करने के लिए सभापति की मेज पर चढ कर खडे हो गये। उसी क्षण जनता ने गाधीजी को देखा। वे सब चुप हो गये। ऐसा लगा, जैसे कुछ अघटित घट गया हो। देखते-देखते एक घवराहट ने उनको जकड लिया। वे स्तव्ध हो उठे और एक सामूहिक स्वर गूज उठा, “ओह, ओह!”

वात यह थी कि गाधीजी के सिर से आधे इच की दूरी पर

बिजली का पखा तीव्र गति से घूम रहा था। सभा को इस प्रकार स्तब्ध देखकर उनकी दृष्टि भी उस ओर गई, लेकिन वह वहा से रचमात्र भी नही हिले। बोले, "सभा का काम चलना ही चाहिए। अगर आप लोग इसी तरह से शोर करते रहे तो मै सुबह तक ऐसा ही खडा रहूगा, फिर चाहे जो हो जाय।"

स्तब्ध सभा और भी स्तब्ध हो आई, इतनी कि सुई गिरने की आवाज भी सुनाई दे सकती थी।

. ५० .

किसी त्रुटि को बरदाश्त नहीं करूंगा

पूना के प्राकृतिक चिकित्सालय में तीन महीने रहने के वाद गाधीजी सेवाग्राम लौटे तो अपने साथ प्राकृतिक चिकित्सा के विश्वविद्यालय की योजना के रूप मे एक कार्य साथ ले आए। डा० दिनशा मेहता उस प्राकृतिक चिकित्सालय के सस्थापक और मालिक थे। वह गाधीजी की तरह ही प्राकृतिक चिकित्सा के अति उत्साही प्रचारक और स्वप्नदृष्टा थे। वरसो पहले उन्होने अपनी निष्ठावान पत्नी के साथ एक मिशनरी के उत्साह से प्राकृतिक चिकित्सा के कार्य के लिए अपने आपको अर्पण कर कर दिया था। वह प्राकृतिक चिकित्सा का एक विश्वविद्यालय स्थापित करना चाहते थे। गाधीजी भी यही चाहते थे। डा० मेहता ने इसके लिए एक ट्रस्ट का निर्माण किया और गाधीजी ने उसका एक ट्रस्टी वनाना स्वीकार कर लिया।

इस पर सरदार ने गाधीजी से विनोद किया, "छिहत्तर वर्ष की आयु मे लोग अपने घर की जिम्मेदारिया भी दूसरो को सौप कर सन्यास ले लेते है और आप दूसरे लोगो की जिम्मेदारिया अपने कधो पर इस उमर मे ओढ रहे है !"

गाधीजी ने उत्तर दिया, "वचपन से ही प्राकृतिक चिकित्सा मेरा वडा प्रिय विपय रहा है। मै अपनी अनेक प्रकार की प्रवृत्तियो के बीच उस सपने को मूर्त रूप देने का प्रयत्न नही कर सका। अव जव ईश्वर ने मुझे यह अवसर दिया है तो मैंने उसे उसका वरदान मानकर स्वीकार कर लिया है।"

प्रस्तावित परिवर्तन की दिशा मे उठाए जाने वाले पहले कदम के रूप मे उन्होने यह घोषणा की कि आगामी पहली जनवरी से यह चिकित्सालय गरीबो की सेवा के लिए गरीबो के योग्य पद्धति पर चलाया जायगा, इसमे अमीरो को तभी लिया जायगा, जब वे गरीबो के साथ रह सकें और उनको मिलने वाले स्थान और आराम से अधिक की आशा न रखे। स्वच्छता का माप-दण्ड वैभव और विलासिता से दूर होने पर भी इस तरह की अन्य किसी भी सस्था मे प्राप्त माप-दण्ड के समान ऊचे-से-ऊचा होगा।

उन्होने सस्था के कार्यकर्ताओ से पूछा, "क्या आप इस परिवर्तन के अनुकूल वन जाने को तैयार होगे और क्या गरीबो की इतनी ही लगन और सावधानी के साथ सेवा कर सकेंगे, जितनी लगन और सावधानी से आप अमीर रोगियो की सेवा-शुश्रूपा करते है ?"

दो दिन वाद उन लोगो ने लिखित रूप मे उत्तर दिया और यथासम्भव सव करने का वचन दिया। उन लोगो को प्रस्तावित

परिवर्तनो की अधिक अच्छी कल्पना कराने के लिए उन्होने चिकित्सालय का निरीक्षण किया। एक-एक कोना बारीकी से देखा और पालिश वाली चीजो पर उगलिया घिस-घिस कर यह जाचा कि उन पर मैल के दाग तो नही है, लेकिन मैल के दाग तो उन पर थे। उन्होने व्यवस्थापको से कहा, "खैर, इस बार तो मै आपको छोड देता हू, परन्तु इसका काम सभालने के बाद मै यहा की स्वच्छता के मामले मे किसी त्रुटि को बरदाश्त नही करूगा।"

: ५१ :

तब मेरी क्या हालत होगी

एक बार एक सत्याग्रही डा० पट्टाभि सीतारामय्या से मिलने के लिए आया। वह वर्धा का आश्रम देखना चाहता था। डाक्टर-साहब ने तुरन्त एक पत्र गाधीजी के नाम लिख दिया। स्टेशन पर पहुचा तो एक और दोस्त जाने के लिए तैयार हो गया। डाक्टरसाहब ने उस पत्र मे उसका नाम भी जोड़ दिया। उस पत्र में केवल वर्धा आश्रम देखने की आज्ञा उन्होने मागी थी। किन्तु उसके उत्तर मे क्रोध से भरा गाधीजी का एक पत्र डाक्टर-साहब को मिला। पढकर चकित रह गए। लिखा था .

प्रिय डा० पट्टाभि,

विना किसी पूर्व सूचना और वर्तन-बिस्तरो के दो नौजवानो को यहा भेजकर आपने मेरी परिस्थिति वहुत ही विपम बना

दी है। अभी तो स्वय हमारा ही यहा प्रबध नही हुआ है। क्या किसी भी सस्था पर इस प्रकार से एकदम बोझ डालना उचित है? मानलो कि दूसरे लोग भी आपका अनुकरण करने लगे तव मेरी क्या हालत होगी!

अध्ययन के हेतु यहा आने वालो के लिए अभी किसी भी प्रकार की व्यवस्था नहीं हुई है। सिखाने जैसा यहा कुछ है भी नही। मैने उन मित्रो को रख लिया है और कह दिया है कि जिस तरह हम सव अपने-अपने जिम्मे का काम पूरा कर मेहतर और मजदूरो के काम मे भी हाथ बटाते है, उसी तरह आपको भी करना होगा। कृपया दुबारा आप ऐसा कोई कदम न उठावे।

यदि आप उनके घर से या मित्रो से रुपये ले सकते हो, तो उनके प्राथमिक खर्च और वापसी सफर के लिए भेज दे। आज-कल आपका वक्त कैसे कट रहा है?

आपका

मो० क० गाधी

डाक्टरसाहब ने तुरन्त क्षमा मागते हुए बीस रुपये मनी-आर्डर द्वारा भेज दिये। लिखा कि उन युवको को आश्रम देखने के लिए भेजा था, रहने के लिए नही। मेरे कारण आप उद्विग्न हुए, इसके लिए मुझे वहुत खेद है।

इसके उत्तर मे गाधीजी ने डा० पट्टाभि को तसल्ली देने के लिए लिखा कि वे दोनो नवयुवक यहा से तवतक वापस लौटनें का नाम लेना नही चाहते जवतक कि आश्रम के जीवन से ऊबते नही। वे मीरावहन की देखभाल मे है।

मदद मिले या न मिले...

दक्षिण अफ्रीका में गाधीजी का सत्याग्रह आदोलन निश्चित रूप से सफलता की ओर बढ रहा था। भारत के वायसराय ने दक्षिण अफ्रीका के प्रधानमत्री जनरल स्मट्स के सामने यह प्रस्ताव रखा कि भारतीयो की मागो के बारे में एक जांच आयोग नियुक्त किया जाना चाहिए।

जनरल दुविधा मे पड गये। आयोग नियुक्त नही करते है तो ब्रिटेन और भारत की नाराजी का डर है। करते है तो यूनियन सरकार की शान में बट्टा लगता है, लेकिन दूसरी ओर सहस्रो भारतीयो को जेलो मे कबतक रखा जा सकता है?

आखिर उन्होने आयोग नियुक्त करने का निश्चय किया। जैसे ही नियुक्ति की घोषणा की गई वैसे ही दक्षिण अफ्रीका के भारतीयो ने उसके बहिष्कार का निर्णय कर लिया। उनका कहना था कि उसके सगठन मे हिन्दुस्तानियो की राय नही ली गई। इतना ही नही, उनके हित को दृष्टि में रखने वाले सदस्यो की नियुक्ति भी नही की गई।

जैसा कि स्वाभाविक था, इस बहिष्कार से उनके हितैषियो को बहुत आश्चर्य हुआ। भारत सरकार पर और हिन्दुस्तान के राजनैतिक क्षेत्रो में इसका प्रभाव बिलकुल भी अच्छा नही होगा, यह सोचकर दीनबन्धु एन्ड्रयूज का मन घुटने लगा, लेकिन जब गाधीजी ने सत्याग्रह की रीति-नीति और हिन्दुस्ता-

नियो के भयकर अपमान की बात विस्तार से बताई तो वह सतुष्ट हो गये। इतना ही नही, ईसाई नव-वर्ष के मगल-दिवस पर, गाधीजी जो कूच आरम्भ करने वाले थे, वह उसमे शामिल होने के लिए भी तैयार हो गये।

उधर जैसा कि स्वाभाविक था, समूचा वातावरण डांवाडोल हो उठा। इग्लैण्ड मे लार्ड एम्पथील की कमेटी नाराज हो गई। उन्होने गाधीजी को तार दिया, "हिन्दुस्तानियो को कमीशन की बात स्वीकार कर लेनी चाहिए। विपरीत निश्चय के लिए हमे बडा अफसोस है।"

हिन्दुस्तान से श्री गोखले का तार आया, "कमीशन को न मानकर नव वर्ष के दिन से कूच करने के समाचारो से मुझे बडा दुख हुआ। आपके इस निश्चय से मेरी और वायसराय लार्ड हार्डिज की स्थिति बडी विषम हो गई है। यह विश्वास रख कर कि यूनियन सरकार आपके प्रश्नो का निपटारा जरूर करेगी, कमीशन को स्वीकार कर लीजिये। उसके सामने जरूरी सबूत दीजिये और कूच बन्द रखिए।"

श्री गोखले और गाधीजी के क्या सम्बन्ध थे, यह सभी जानते है। लेकिन गाधीजी ने बडी दृढता के साथ उनको जवाब दिया, "आपके दुख को मै समझ सकता हू। बडी-से-बडी बात को छोडकर आपकी सलाह का आदर करने की मेरी इच्छा रहती है। लार्ड हार्डिज ने जो सहायता दी है, वह अमूल्य है। मै भी चाहता हू कि वह सहायता आखिर तक मिलती रहे, परन्तु मैं चाहता हू कि आप हमारी स्थिति को समझे। इसमे हजारो आदमियो की प्रतिज्ञा का सवाल है। प्रतिज्ञा शुद्ध है।

सारी लडाई की रचना इस प्रतिज्ञा पर हुई है। अगर प्रतिज्ञा का बन्धन न होता तो हममें से बहुत से लोग आजतक गिर गये होते। हजारो की प्रतिज्ञा पर एक बार पानी फिर जाय तो फिर नीति-बन्धन जैसी कोई चीज ही नही रहती। प्रतिज्ञा लेते समय लोगो ने पूरा विचार कर लिया था। उसमे किसी प्रकार की अनीति तो है ही नही। वहिष्कार की प्रतिज्ञा लेने का कौम को अधिकार है। मै चाहता हू कि आप भी ऐसी सलाह दे कि इस प्रकार की प्रतिज्ञा किसी भी व्यक्ति के लिए न टूटे और हर तरह का खतरा उठाकर भी उसका पालन होना चाहिए। यह तार लार्ड हार्डिज को वता दीजिए। मै चाहता हू कि स्थिति विपम न हो। हमने लडाई ईश्वर को साक्षी रखकर, उसी की सहायता पर आधार रखकर, आरम्भ की है। इसमें बुजुर्गो की और वडे आदमियो की मदद हम माँगते है और चाहते है। वह मिले तो हमें खुशी होती है, परन्तु मदद मिले या न मिले, मेरी नम्र राय यह है कि प्रतिज्ञा का बन्धन हरगिज न टूटना चाहिए। उसके पालन मे मै आपका समर्थन और आशीर्वाद चाहता हू।"

: ५३ :

यह बेगार नहीं तो क्या है ?

दाण्डी कूच के ऐतिहासिक दिनो में प्रवन्धको ने एक मजदूर की भी व्यवस्था की थी। रात के समय वह गैसबत्ती लेकर

चलता था। एक दिन भाटगॉव मे भाषण करते हुए वडे मार्मिक शब्दो मे गाधीजी ने उसकी चर्चा की। वह वोले

"मैने देखा है कि आप लोगो ने रात के सफर के लिए एक भारी गैस की वत्ती का प्रवन्ध किया है और उसे एक गरीव मजदूर अपने सिर पर एक तिपाई के ऊपर रखकर चलता है। यह एक लज्जाजनक दृश्य है। उस आदमी को तेज चलने के लिए विवश किया जा रहा है। रात मै उस दृश्य को सहन नही कर सका। इसलिए मैने चाल तेज की और मै सारे समुदाय से आगे निकल गया, पर यह सब वेकार हो गया। उस वेचारे को मेरे पीछे-पीछे दौडने को मजबूर किया गया। मेरी लज्जा की हद हो गई। अगर वह बोझा ले जाना ही है तो मै यह देखना पसन्द करता कि हममे से ही कोई उसे ले चलता। तव हम तिपाई और बत्ती दोनो को ही धता बता देते। कोई मजदूर ऐसा बोझा अपने सिर पर नही ले जायगा। हम बेगार का विरोध करते है और वह ठीक ही है, परन्तु यह बेगार नही तो और क्या है? अगर हम जल्दी ही अपने तौर-तरीके नही सुधार लेगे तो हमने लोगो के सामने स्वराज्य की जो तस्वीर रखी है, वैसा स्वराज्य सम्भव नही होगा।"

तुम्हारा दुःख तुम्हारे कथन से कहीं अधिक जान पड़ता है

चम्पारन के किसानो पर गोरे निलहो का अत्याचार पराकाष्ठा पर पहुच चुका था। बहू-बेटियो की इज्जत दिन-दहाड़े लूट ली जाती थी। घर मे आग लगा देना साधारण बात थी। बेचारे किसान त्रस्त हो उठे थे। उनकी यह दर्द-भरी कहानी काग्रेस के नेताओ तक पहुँचाने के लिए कुछ स्थानीय कार्यकर्त्ता लखनऊ पहुचे। उस वर्ष काग्रेस का अधिवेशन लखनऊ मे हो रहा था।

दिनभर के काम के पश्चात श्री रामदयाल प्रसाद शाह और श्री राजकुमार शुक्ल अधिवेशन की झांकी लेने के लिए निकले। देखा कि लोकमान्य बालगगाधर तिलक चले आ रहे है। उन्हे मार्ग मे ही रोककर उन लोगो ने अपनी व्यथा उनके सामने प्रकट की। लोकमान्य ने कहा कि वह स्वराज्य के लिए चिन्तित है। चम्पारन के लिए तत्काल ही शायद कुछ न कर सकेगे।

वे लोग और आगे बढे तो महामना पडित मदनमोहन मालवीयजी आते हुए दिखाई दिये। उनसे भी उन्होने अपनी वह दुख-भरी कहानी कह सुनाई। महामना बोले, "मैं काशी विश्वविद्यालय के झझटो मे फसा हुआ हूँ। मेरे पास समय ही नही है, लेकिन मै तुम्हे गाधीजी के पास जाने की सलाह दूँगा,

तुम्हारे काम के लिए वह ही सबसे उपयुक्त व्यक्ति है।"

दूसरे दिन वे लोग गाधीजी के डेरे मे पहुचे। वह दातुन कर रहे थे। उसके मुख पर एक अद्भुत शान्ति और गम्भीरता विराजमान थी। बडी देर तक वह धैर्यपूर्वक उनकी कहानी सुनते रहे। फिर सहसा गम्भीर होकर उन्होने व्यथित स्वर मे कहा, "तुम लोगो का दु ख तुम्हारे कथन से कही अधिक जान पडता है। मुझसे क्या चाहते हो ?"

श्री शाह बोले, "इस सम्बन्ध मे काग्रेस-अधिवेशन मे एक प्रस्ताव पास करा दीजिए।"

गाधीजी ने उत्तर दिया, "उससे क्या होगा ? पहले मै स्वय वहा की स्थिति को देखना चाहूगा। अहिसात्मक ढग से दु खो का सामना करने पर ही उनका अत हो सकता है। तुम सबको अधिक-से-अधिक सख्या मे जेल जाने के लिए तैयार रहना चाहिए।"

कार्यकर्त्ता कुछ भी करने को तैयार थे। उन्होने आग्रहपूर्वक चम्पारन आने का आमन्त्रण गाधीजी को दिया।

गाधीजी बोले, "अप्रैल मे मुझे कलकत्ता जाना है। वही आकर आप लोग मिले।"

श्री राजकुमार शुक्ल कलकत्ता जाकर उनसे मिले। गाधीजी चम्पारन पहुचे। वहा की स्थिति की स्वय उन्होने जाच की। उसके बाद उन्होने वहा जो किया, उसे सब जानते है।

उन्हें हमारी भाषा सीखनी होगी

गाधीजी जब गुजरात में बस गये तो वहाँ जैसे जीवन जाग उठा। राजनैतिक कार्यकर्त्ताओ ने 'गुजरात राजकीय परिषद' की स्थापना की। गाधीजी इसके अध्यक्ष मनोनीत हुए। इसका पहला अधिवेशन हुआ गोधरा में। उसमे गाधीजी गुजराती में ही बोले थे।

उन दिनो सम्राट् के प्रति राजनिष्ठा का प्रस्ताव पास करने की परिपाटी थी, परन्तु जब गाधीजी के सामने वह प्रस्ताव आया तो उन्होने उसे फाड डाला। बोले, "ऐसा प्रस्ताव पास करना बेहूदापन है। जबतक हम बगावत नही करते तब-तक हम राजनिष्ठ है ही। इस बात की बार-बार घोपणा करनें की कोई आवश्यकता नही। क्या कोई स्त्री अपने पति के सामने बार-बार पतिव्रता होने की घोपणा करती है? उसने शादी की है। इसका अर्थ है कि वह पतिव्रता है।"

यह सुनकर कार्यकर्त्ता अवाक् रह गये। गाधीजी बोले, "अगर कोई आपसे पूछे कि राजनिष्ठा का वह प्रस्ताव क्या हुआ तो कह देना, मैने उसे फाड दिया है।"

इसी परिपद् मे वीरमगाव के बारे मे एक प्रस्ताव पास हुआ था। अध्यक्ष होने के नाते गाधीजी को उस प्रस्ताव को वायसराय के पास भेजना था। उन्होने तुरन्त इस आशय का एक तार लिखवाया। उसके नीचे अपने नाम के बाद लिखा,

'अध्यक्ष, गुजरात राजकीय परिषद्।'

काका कालेलकर यह देखकर बोले, "बेचारा वायसराय इन देशी शब्दो का अर्थ क्या समझेगा ?"

गांधीजी ने उत्तर दिया, "अगर उन्हे यहा राज्य करना है तो हमारी भाषा सीखनी ही होगी या फिर किसी दुभापिये को अपने पास रखना होगा, जो उन्हे समझाया करे। अपनी गर्ज से ही तो वे राज्य कर रहे है न ?"

अन्त मे तार वैसा ही गया और उसका जवाब भी ठीक-ठीक मिला।

: ५६ :

कटोरा ऐसा उजला होना चाहिए कि

आगाखा महल मे नजरबन्दी के समय सब लोग सवेरे साढे पाच बजे उठते थे और दातुन आदि से निपट कर लगभग छः बजे प्रार्थना करते थे। उसके बाद गाधीजी दो चम्मच शहद, एक नीबू का रस, आठ औंस गर्म पानी मे मिलाकर लेते थे। उपवास के बाद कमजोरी होने के कारण थोडी देर वह आराम कर लेते थे। मनु उनके वर्तन साफ करती थी। उस समय गाधीजी खाने के लिए जेल का लोहे का कटोरा ही इस्तैमाल करते थे। उनका आदेश था कि उसे ऐसा माजा जाय, जिससे उसमे मुह दिखाई दे सके।

वह कहते थे कि दक्षिण अफ्रीका की जेल मे मैं कटोरे को

इतना बढिया माजता था कि जेलर और सुपरिन्टेन्डेन्ट दोनो खुश हो जाते थे। वहा नीबू के छिलके जैसी कोई चीज नही मिलती थी। रेत और हाथ की ताकत से ही माजना पडता था।

मनु से भी वह ऐसी ही आशा करते थे। यरवदा जेल से काम करने के लिए पच्चीस कैदी जाते थे, लेकिन वह अपना काम स्वय ही करते थे। किसी दिन वह कटोरा साफ नही होता तो बापू मनु को क्षमा नही करते थे। कहते, "यह कटोरा ऐसा उजला होना चाहिए कि इसमे मुह देखकर हजामत बना सकू।"

: ५७ :

यह अपने आप उड़ जायगी

प्रार्थना समाप्त हो जाने के बाद एक दिन गाधीजी के हाथ के अगूठे पर एक मधुमक्खी आ बैठी। उन्होने उसे उडाने की तनिक भी चेष्टा नही की। वह वही बैठी रही और वह उसे ध्यानपूर्वक ऐसे देखते रहे, जैसे कोई वैज्ञानिक किसी पदार्थ के गुण-दोषो का आविष्कार कर रहा हो। डा० हरिप्रसाद देसाई भी उस समय वही पर बैठे हुए थे। वस्तुतः उन दिनों वे सब लोग थोरो, बनियन और रामदास स्वामी की पुस्तके पढकर उन पर चर्चा किया करते थे। मधुमक्खी के प्रति गाधीजी का यह व्यवहार डा० देसाई को बडा विचित्र-सा लगा। उन्होने कहा, "इसे उडा दीजिये। बेकार कही डक न मार दे।"

गाधीजी हस कर बोले, "आप भूलते है। अगर मै इसे अभी उडाने की कोशिश करू तभी यह डक मारेगी। इसी तरह चुपचाप बैठा रहू तो अपने आप उड जायगी।"

सचमुच दो-चार क्षण बाद वह मधुमक्खी स्वय ही उड गई और गाधीजी खिलखिला कर हस पडे।

५८ :

कहीं शरीर को अजगर की तरह पड़ा रखकर सहलाया जाता है

जलियावाला बाग के अमानुपिक हत्याकाड के बाद राप्ट्रीय महासभा ने उसकी जाच के लिए एक समिति बनाई थी। गाधीजी उसके सदस्य थे। अनेक दिनो तक घर-घर घूम कर उन्होने हजारो व्यक्तियो की गवाहिया इकट्ठी की थी। उनमे से एक गवाही को भी चुनौती देने का साहस किसीको नही हुआ। उस जाच समिति की रिपोर्ट गाधीजी ने ही लिखी थी।

उसके बाद वह साबरमती आश्रम लौट गये। उन्ही दिनो पडित सुखलालजी उनसे मिलने के लिए आए। कमरे मे जहा गाधीजी बैठे थे वही महादेव देसाई भी कुछ काम कर रहे थे। पडितजी को देखकर गाधीजी खिलखिला पडे और बोले, "आओ।"

सुखलालजी गाधीजी की ओर मुडे। गाधीजी बहुत थक गये थ। सुखलालजी ने कहा, "बापूजी, आप तो बहुत थके मालूम

होते है। कुछ अधिक परेशान भी लग रहे है। ऐसा प्रतीत होता है, पजाव मे द्वार-द्वार भटकने और रिपोर्ट लिखने के कारण आपने वहुत जागरण किया है। अव आप कही जाकर एक-दो महीने के लिए आराम क्यो नही करते ?"

गाधीजी ने तुरन्त उत्तर दिया, "कही शरीर को ऐसे अजगर की तरह पडा रखकर सहलाया जाता है!"

: ५९ :

ताज के सच्चे हकदार तो ये व्यक्ति हैं

गाधीजी जव दक्षिण अफ्रीका से लौटे तो घूमते-घामते मद्रास गये। वहा उनका वडा स्वागत-सत्कार किया गया। उन्हे और कस्तूरवा को एक मान-पत्र भेट किया। उस मान-पत्र मे उनकी वहुत अधिक प्रशसा की गई थी। उसका उत्तर देते हुए गाधीजी ने कहा, "अध्यक्ष महोदय, इस मान-पत्र मे मेरे और मेरी पत्नी के लिए जिस भापा का प्रयोग किया गया है, यदि हम उसके दसवे हिस्से के भी हकदार है तो मै नही जानता कि आप उन लोगो के लिए किस भापा का प्रयोग करेगे, जिन्होने दक्षिण अफ्रीका मे अपने पीडित देशवासियो के लिए अपने प्राणो की चिन्ता भी नही की! नागप्पन और नारायणस्वामी जैसे सत्रह-अठारह वर्ष के लड़को को आप किस भापा मे याद करेगे, जिन्होने अपनी मातृभूमि की प्रतिष्ठा के लिए निश्चल श्रद्धा के साथ सभी कष्ट

और सभी अपमान सहे ? उस सत्रह वर्ष की प्यारी लडकी वली-अम्मा के बारे मे आप कौन-सी भाषा काम मे लेना चाहेगे, जो मैरित्सबर्ग जेल से ककाल बन कर छूटी थी और उसीके परिणाम-स्वरूप एक महीने के भीतर चल बसी थी ? यह दुर्भाग्य की बात है कि मेरे और मेरी पत्नी के काम के सम्बन्ध मे सभी लोग जानते है। हमने जो कुछ किया है, उसका आपने बेहद बढा-चढा कर बखान किया है, लेकिन वास्तव मे आप जो ताज हमारे सिर पर रखना चाहते है उसके सच्चे हकदार ये व्यक्ति है।"

: ६० :

प्रार्थना नियत समय पर करनी ही चाहिए

आंध्र प्रदेश मे चिकाकोल अपनी महीन खादी के लिए सारे भारत मे प्रसिद्ध है। एक बार यात्रा करते-करते गाधीजी जब वहा पहुचे तो रात हो आई थी। स्थानीय लोगो ने उनके लिए कताई दगल की व्यवस्था की थी और उस दगल मे अच्छी-अच्छी कत्तिने भाग लेने आई थी। गाधीजी खादी प्रचार के लिए ही यह यात्रा कर रहे थे।

उनके दल मे काका कालेलकर और महादेव देसाई भी थे। दिन-रात मोटर मे यात्रा करते-करते वे थक गये थे। इसलिए उन्होने इस दगल मे बैठना उचित नही समझा और जाकर सो रहे। लेकिन गाधीजी को तो उस दगल मे जाना ही था।

उन्हे कब छुट्टी मिली, वह कब सोए, किसी को कुछ पता नही चला। सवेरे चार बजे सब लोग प्रार्थना के लिए उठे तब गाधीजी ने उनसे पूछा, "रात को सोने से पहले क्या तुम लोगो ने प्रार्थना की थी?"

काकासाहब ने उत्तर दिया, "जब आया तो इतना थक गया था कि सो गया। प्रार्थना का स्मरण ही नही रहा।"

महादेवभाई बोले, "मै भी थक गया था, लेकिन आख लगने से पहले मुझे स्मरण हो आया। तब बिस्तर पर बैठकर ही मैने प्रार्थना कर ली।"

गाधीजी ने कहा, "मै तो घण्टा-डेढ घण्टा दगल मे बैठा। वहा से लौटा तो इतना थक गया था कि प्रार्थना करना भूल गया। दो ढाई बजे नीद खुली तो याद आया। तब ऐसा आघात लगा कि सारा शरीर कापने लगा। पसीने से तर हो गया। उठ कर बैठा। खूब पश्चात्ताप किया। जिसकी कृपा से मै जीता हू, अपने जीवन की साधना करता हू, उस भगवान को ही भूल गया! इतनी बडी गलती हो गई! मैने भगवान से क्षमा मागी, लेकिन तब से नीद नही आई। ऐसे ही बैठा हू।"

प्रार्थना के बाद उन्होने फिर कहा, "यात्रा मे भी शाम की प्रार्थना हमे नियत समय पर करनी चाहिए। सारे दिन का कार्यक्रम पूरा करके सोने से पहले जब अवसर मिलता है तभी हम प्रार्थना करते है। यही गलती है। आज से शाम के सात बजे प्रार्थना होगी, हम कही भी क्यो न हो।"

उसके बाद सात बजे वह जहा भी होते, बस्ती मे, जगल मे, मोटर रोक कर प्रार्थना करते थे।

तुमने तो बड़ा गुनाह किया

एक वार गाधीजी ने वलवन्तसिह को एक शीशी दी और कहा, "इसके लिए एक डाट चाहिए।"

उस समय आश्रम मे एक वढई काम कर रहा था। वलवन्त-सिह ने उसी से शीशी की डाट वना देने के लिए कहा। उसने एक सुन्दर-सी डाट वना दी। गाधीजी ने जव उसे देखा तो वहुत खुश हुए और लगे उसकी प्रशसा करने। वलवन्तसिह भांप गये कि गाधीजी यह समझ रहे है कि यह डाट मैंने वनाई है, इसलिए वह वोले, "वापूजी, यह डाट मैंने नही वनाई है।"

यह सुनकर गाधीजी सहसा गम्भीर हो उठे। वोले, "तो यह डाट तुमने वढई से वनवाई है! मै तो तुम्हे शावाशी देना चाहता था, लेकिन तुमने तो वडा गुनाह किया। मैंने तो तुम्हे वनाने के लिए कहा था। वेशक, आज खराव वनती, लेकिन एक कला तो आती। औजार पकडना सीखते। दुवारा और अच्छी वनाते। तीसरी वार उससे भी अच्छी वनती और इस तरह तुम इस कला मे निपुण हो जाते, लेकिन तुम्हे जो काम सौपा गया था, उसकी जिम्मेदारी तुमने दूसरे पर डाल दी। यह अच्छी वात नही है।"

एकता हमारे सिर पर थोपी है

अपने इग्लैण्ड-प्रवास में गाधीजी 'मैनचेस्टर गार्जियन' के अवसरप्राप्त सपादक, सुप्रसिद्ध पत्रकार, पिचासी वर्ष के स्कॉट से मिलने उनके निवासस्थान पर गये थे। उस समय वह बोगनोर मै अपनी बहन के पास रह रहे थे।

उनके साथ गाधीजी की लम्बी बातचीत हुई। गाधीजी तर्क-वितर्क अथवा वाद-विवाद करके उन्हे किसी प्रकार भी तग नही करना चाहते थे। ज्योही वृद्ध स्कॉट उनका स्वागत करने के लिए आगे आये, गाधीजी ने उनसे कहा, "यह तो केवल तीर्थ-यात्रा है। गलतफहमी और विपरीत प्रचार के विरुद्ध आपके पत्र ने जो अपूर्व काम किया है, मैने सोचा कि और कुछ नही तो केवल कृतज्ञता-प्रदर्शन के लिए ही मुझे आपसे मिलना चाहिए।"

स्कॉट गाधीजी को अपने घर के पिछले भाग के एक काच के कमरे मे ले गये। यह कमरा इस प्रकार बनाया गया था कि चारो ओर से उसमें सूर्य का प्रकाश अच्छी तरह आ सके। बातो-ही-बातो में उन्होने पूछा, "क्या आप नही मानते कि भारत मे जो एकता है, वह अग्रेजी शासन के ही कारण है?"

गाधीजी ने कहा, "हा, यह एकता अग्रेजी शासन ने हमारे सिर पर थोपी है। नतीजा यह हुआ है कि जैसा कि हम देख रहे है, आनबान का प्रसग आने पर असख्य विनाशक शक्तिया पैदा हो जाती है। मेरी इस बात से मैक्डोनल्ड चिढ गये थे, किन्तु

मेरा यह पूर्ण विश्वास है कि यदि परिपद् मे भारत के चुने हुए सच्चे प्रतिनिधि होते तो साम्प्रदायिक प्रश्नो का निपटारा होने मे कुछ भी कठिनाई न होती।"

और भी बहुत-सी वाते थी, लेकिन जैसा कि हमने आरम्भ मे कहा, उनका उद्देश्य स्कॉट से दलील करना नही था। उन्होने घटनाओ से परिपूर्ण भूतकाल की चर्चा की। 'मिठास और तेजपूर्ण काली आखोवाले ग्लेडस्टन और सदैव के लिए इतिहास पर अपनी राजनीतिज्ञता की छाप बिठा देने वाले कैम्पबेल बेनरमेन जैसे व्यक्तियो की और दक्षिण अफ्रीका का विधान बनाते समय उन्होने जो बडा हिस्सा लिया, उसकी याद की और ऐसे वीर पुरुपो के लिए 'आह' भरी। चलते समय वोले, "मुझे आशा है कि मेरे उद्देश्य के प्रति आपकी शुभकामनाए है।"

इस पर वृद्ध स्कॉट ने प्रेमपूर्वक कहा, "हा-हा, अवश्य।"

: ६३ :

यदि मैं बदल गया तो

तिलक स्वराज्य फण्ड के सबध मे गाधीजी भारत का भ्रमण कर रहे थे। घूमते-घूमते वह बम्बई जा पहुचे। वहा 'पारसी राजनैतिक सभा' ने पारसियो के लिए विशेप रूप से एक सभा आयोजित की। प्रवेश टिकटो से था। इस सभा मे सरोजिनी नायडू, लाला लाजपतराय और स्टोक आदि

सुप्रसिद्ध व्यक्ति बोलनेवाले थे। सभापतित्व करनेवाले थे स्वय गाधीजी। इसलिए सारा भवन समय से पूर्व ही इस प्रकार भर गया कि कही तिल रखने लायक जगह न रह गई।

गाधीजी के सामने जब वक्ताओ की सूची आई तो उसमे गुजराती के प्रमुख कवि श्री रायचुरा का नाम भी था। सभा के आयोजक श्री भरूचा से गाधीजी ने पूछा, "रायचुरा बोलेगे या गायगे ?"

श्री भरूचा ने उत्तर दिया, "गायगे।"

गाधीजी ने पूछा, "कौनसा गीत गायगे ?"

श्री भरूचा ने उत्तर दिया, "धन्य भूमि गुजरात मात !"

यह सुनकर गाधीजी बोले, "मै उन्हे यह गीत नही गाने दूगा।"

श्री भरूचा आसानी से हार माननेवाले नही थे। वह श्रोताओ के पास गये और बोले, "गांधीजी नही चाहते कि श्री रायचुरा 'धन्य भूमि गुजरात मात' यह गीत गाये।"

यह सुनकर श्रोता बडे उत्तेजित हुए। वे यह गीत सुनना चाहते थे। उन्होने कहा, "महात्माजी से कहिए कि यह कोई सार्वजनिक सभा नही है। हम यहा टिकट लेकर आये है। इस सभा का कार्यक्रम देखकर ही इतने पैसे हमने दिये है। श्री रायचुरा के मुह से उनका गीत 'धन्य भूमि गुजरात मात' अवश्य सुनेगे।"

परन्तु गाधीजी अडिग थे। उधर श्रोता भी अडिग थे। जब श्री रायचुरा के बोलने का अवसर आया तो श्री भरूचा खड़े हो गये और श्रोताओ को सम्बोधित करते हुए बोले, "गांधीजी

के प्रति मेरे मन मे इतनी श्रद्धा है कि मैं उनकी आज्ञा के लिए कैसा भी मूल्य चुकाने के लिए तैयार हू। लेकिन इस वार आपके आग्रह पर मै उनकी आज्ञा का उल्लघन करना चाहूगा। मैं भाई रायचुरा से निवेदन करता हू कि वह अपना गीत 'धन्य भूमि गुजरात मात' सुनाये।"

जहा सभापति वैठे थे उसके दूसरे कोने से कवि ने अपना गीत शुरू किया ·

"धन्य भूमि गुजरात मात,
तुज भाग्यलेख कंई भव्य दिसे।
सहु साधू नो साचो साधु,
साबरमती जळतीर वसे।"

गाधीजी की जय के तुमुलनाद से सभा-भवन गूज उठा। पर वह मूर्त्तिवत् शान्त बैठे रहे। अन्त मे सभापति पद से भाषण देने की उनकी बारी आई। इस अवसर पर उन्होने जो कुछ कहा, वह वही कह सकते थे। वह वोले, "आप लोगो ने भाई रायचुरा का गीत सुना। सुनकर आप दीवाने हो उठे। तालिया वजाई। रूमाल हिलाये। जयनाद भी किया। लेकिन मै आपसे एक वात कहता हू। एक व्यक्ति की उपस्थिति मे उसका इस तरह गुणगान नही करना चाहिए। यह सबसे बडी गलती है। आज तुम जिस व्यक्ति की प्रशसा कर रहे हो वह कल भी वैसा ही रहेगा उसका क्या भरोसा! अगर वह व्यक्ति कल बदल जाय तो ऐसी कविता लिखनेवाले, गानेवाले, उस पर मुग्ध होकर हर्षनाद करने वाले, तालिया वजाने वाले और रूमाल लहराने वाले सबके लिए यह एक बहुत बड़ी लज्जा की बात होगी।"

मैं इसे धोखा मानता हूं

जिस समय गांधीजी दक्षिण अफ्रीका में रग-भेद के विरुद्ध सघर्ष कर रहे थे उसी समय अचानक कस्तूरबा गाधी अस्वस्थ हो गई। उन्हे बार-बार रक्तस्राव होने लगा। डाक्टर की सलाह के अनुसार उन्हे आपरेशन कराना पडा।

आपरेशन सफल हुआ और दो-तीन दिन बाद ही डाक्टर ने गाधीजी को जोहानिसबर्ग जाने की अनुमति दे दी। वह चले गये, लेकिन कुछ ही दिन बाद उन्हे सूचना मिली कि बा की तबियत सुधर नही रही है। वह उठ-बैठ नही सकती। एक बार तो बेहोश भी हो गई थी।

ऐसी गम्भीर स्थिति देखकर डाक्टर ने अनुभव किया कि बा को मास का शोरबा अत्यन्त आवश्यक है। उन्होने तुरन्त जोहानिसबर्ग गाधीजी को फोन किया और बा को मास का शोरबा देने की अनुमति चाही।

गाधीजी ने उत्तर दिया, "मै ऐसी इजाजत नही दे सकता, किन्तु बा स्वतन्त्र है। उनसे पूछ देखिये, वह लेना चाहे तो अवश्य दीजिये।"

डाक्टर बोले, "बीमार से ऐसी बाते पूछना मुझे पसन्द नही है। इसलिए आपका यहां आना बहुत जरूरी है। अगर आप मुझे मांस का शोरबा देने की अनुमति नही देते तो मै आपकी पत्नी के लिए जिम्मेदार नही रहूगा।"

गाधीजी डरबन पहुचे। डाक्टर ने उन्हे बताया, "मैंने तो रोगी को शोरबा पिलाकर ही टेलीफोन किया था।"

गाधीजी बहुत दुखी हुए, लेकिन शान्त बने रहे। डाक्टर उनके मित्र थे। उन्होने इतना ही कहा, "डाक्टर, मै इसे धोखा मानता हू।"

डाक्टर ने दृढता से उत्तर दिया, "बीमार का इलाज करते समय हम ऐसी बातो की चिन्ता नही करते। हमारा धर्म तो किसी भी तरह रोगी को बचाना है।"

गाधीजी ने उसी तरह शान्त स्वर मे कहा, "डाक्टर-साहब, आप स्पष्ट कहिए, आप क्या चाहते है ? मै अपनी पत्नी को उनकी इच्छा के बिना मास नही खिलाने दूगा। ऐसा करने से उसकी मृत्यु भी हो जाय तो मै उसे सहन करने को तैयार हू।"

डाक्टर बोले, "आपका यह दर्शन मेरे घर मे नही चल सकता। जबतक यहा है तबतक जो कुछ भी उचित होगा, मै उन्हे दूगा। जानबूझ कर मै उनकी मृत्यु नही होने दूंगा। हा, यदि आपको स्वीकार न हो तो आप अपनी पत्नी को ले जा सकते है।"

गाधीजी के साथ उस समय उनके पुत्र भी थे। उन्होने उससे पूछा। उसने कहा, "आपकी बात मुझे स्वीकार है। बा को मास किसी भी हालत मे नही दिया जायगा।"

इसके बाद गाधीजी बा के पास गये। वह इतनी अशक्त थी कि उनसे कुछ पूछना अच्छा नही था। फिर भी यह धर्म-सकट की स्थिति थी। गाधीजी ने सक्षेप मे उनसे सबकुछ कहा।

उन्होंने दृढता से जवाब दिया, "मै मांस का शोरबा नही लूगी। मनुष्य की देह बार-बार नही मिलती। चाहे आपकी गोद में मै मर जाऊ, लेकिन इस शरीर को भ्रष्ट नही होने दूगी।"

गाधीजी ने बा को बार-बार समझाया, लेकिन वह टस-से-मस न हुई। बोली, "मुझे यहा से ले चलिये।"

गाधीजी बहुत प्रसन्न हुए, लेकिन जब डाक्टर ने यह सुना तो वह बहुत क्रुद्ध हुआ। बोला, "आप तो बडे कठोर व्यक्ति मालूम होते है। मै कहता हू, आपकी पत्नी यहा से जाने लायक नही है। रास्ते मे उनकी मौत हो सकती है। फिर भी आप हठ करते है तो ले जाइये।"

उस समय रिमझिम-रिमझिम मेह बरस रहा था। स्टेशन दूर था, लेकिन फिर भी भगवान पर भरोसा करके गाधीजी ने रिक्शा मगवाया और उसी स्थिति में पत्नी को उसमें बैठाकर रवाना हो गये। मन-ही-मन वह भी कुछ डर रहे थे, लेकिन बा दृढ थी और मार्ग के सारे सकट झेलते हुए वह फिनिक्स पहुच गई। वहा पर पानी के उपचार से धीरे-धीरे उनका शरीर पुष्ट होने लगा।

: ६५ :

आप जो कुछ देंगे मैं जरूर लूंगा

गाधीजी ने दक्षिण अफ्रीका से लौटकर अन्त में अहमदाबाद मे बसने का निश्चय किया। कोचरब में उन्होने एक मकान

लेकर उसीमें अपना आश्रम स्थापित किया।

अभी कुछ ही महीने बीते थे कि श्री अमृतलाल ठक्कर की सिफारिश पर एक अत्यज परिवार को उन्होने आश्रम मे रख लिया। अब तो सहायक मित्र-मडली मे खलबली मच गई। जिस कुए मे मकान मालिक का हिस्सा था, वहा पानी भरना मुश्किल हो गया। चरस वाले पर आश्रमवासियो के छीटे पड जाते तो वह भ्रष्ट हो जाता। उसने उस अत्यज परिवार को सताना शुरू कर दिया। गाधीजी ने उनसे कहा, "वे कुछ भी करे, तुम सहते जाओ। दृढतापूर्वक पानी भरते रहो।"

आश्रमवासियो ने ऐसा ही किया। उनकी सहन-शक्ति देखकर चरसवाले को लज्जा आई। उसने गालिया देना बन्द कर दिया, लेकिन पैसे की भी तो मदद बन्द हो गई थी। जो भाई मदद देने वाले थे, उन्होने अत्यज के भर्ती हो जाने के बाद आश्रम का बहिष्कार कर दिया। गाधीजी ने अपने साथियो से कहा, "हमे कही से भी कोई मदद न मिले तो भी हम अहमदाबाद नही छोडेगे। अत्यजो की बस्ती मे जाकर उनके साथ रहेगे और जो कुछ मिलेगा उससे अथवा मजदूरी करके अपना निर्वाह करेंगे।"

आखिर उनके भतीजे मगनलाल ने एक दिन उनसे कहा, "अगले महीने आश्रम का खर्च चलाने के लिए हमारे पास पैसे नही है।"

शान्त भाव से गाधीजी बोले, "तो हम अत्यजो की बस्ती मे जाकर रहेगे।"

तभी एक दिन क्या हुआ! किसी लडके ने आकर गाधीजी

से कहा, "बाहर मोटर खड़ी है। एक सेठ आपको बुला रहे है।"

गाधीजी गये। सेठ ने उनसे कहा, "मेरी इच्छा आश्रम की सहायता करने की है। आप स्वीकार करेगे ?"

गाधीजी बोले, "आप जो कुछ देगे, मै जरूर लूगा। मै इस समय आर्थिक सकट में हूँ।"

सेठजी अगले दिन आने का वायदा करके चले गये। दूसरे दिन नियत समय पर मोटर का भोपू बजा। सेठजी अन्दर नही आये। गाधीजी उनसे मिलने गये। उनके हाथ पर तेरह हजार के नोट रखकर वह चुपचाप वापस लौट गये।

६६ :

भारत की संस्कृति अनोखी है

साम्प्रदायिक उत्पात के समय नोआखाली-प्रवास में एक दिन मनु गाधीजी के घी मल रही थी और वह कुछ पेचीदा अग्रेजी पत्र-व्यवहार सुन रहे थे। पत्र-व्यवहार पूरा हुआ तो मनु ने कहा, "आप मुझे कालेज में जाकर एम० ए० या बी० ए० तक पढ़ने देते तो आपका अग्रेजी में होनेवाला काम मै भी आसानी से कर सकती थी, परन्तु आपने मुझे पढने ही नही दिया।"

गाधीजी बोले, "मुझे तो तुम्हे पढ़ना और गुनना दोनो सिखलाना है, उसका क्या होगा ?"

मनु ने उत्तर दिया, "देखिए, महादेवकाका इतना पढ़े तभी

तो आपके निजी मत्री वन सके। और भी जितने वडे लोग है, सवके पास डिग्रिया है, इसीलिए तो वे इतने ऊचे चढे।"

गाधीजी हस पडे। वोले, "मोटे सो खोटे। 'डिग्री' की जगह तुम 'उपाधि' शव्द काम मे लो। उपाधि सचमुच उपाधिक ही है। मै बैरिस्टर वना, इसका मुझे आज पश्चात्ताप होता है। सच कहू कि मै बैरिस्टर हू, इसका मुझे कभी खयाल ही नही आता। इसलिए अपने अनुभव के आधार पर दूसरो को तो ऐसी उपाधि से वचाना ही चाहिए। आजकल की यूनीवर्सिटी की पढाई मे जो रटाई हो रही है वह मुझे खटकती है। देहात मे अपार काम पडा है। विद्यार्थी पढने और रटने मे जितना समय गवाते है, उतना यदि कोई रचनात्मक काम करने मे लगाये तो देश की शक्ल बदल जाय। हा, इस पढाई के पीछे ज्ञान प्राप्त करने का ध्येय हो तो अलग बात है। तव तो ज्ञान के पीछे पढाई और पढाई के पीछे ज्ञान यह मत्र होना चाहिए। परन्तु आजकल परीक्षा के पीछे पढाई और पढाई के पीछे परीक्षा, यह दृष्टि होती है और फिर इस ज्ञान का उपयोग रुपया कमाने मे होता है।"

इसके बाद ज्ञान की सीमा की लम्वी चर्चा करते हुए उन्होने गीता के आधार पर ईश्वर के प्रति अर्पण होने की भावना की सराहना की। कहा, "ईश्वर का काम करने मे तुम अपनी प्राप्त की हुई उपाधि का यहा उपयोग करोगी? मै तुम्हारे मन मे यही बात विठाना चाहता था। कदाचित तुम पढती होती तो आज कहा होती? मेरी चले तो मैं सभी कालेज के लडके और लडकियो को दगे की इस आग मे झोक दू। सचमुच यदि हमारे विद्यार्थियो के मन से उपाधि का मोह निकल जाय तो तुम देखोगी

कि सारी दुनिया के नक्शे में हिन्दुस्तान जो बिन्दुमात्र है, वह समुद्र जैसा हो जाय। जैसा देश वैसी ही उसकी रहन-सहन और वैसा ही उसका काम-काज होना चाहिए। परन्तु अग्रेजो का न करने लायक अनुकरण करने से ही हमारा पतन होगा। 'हस कौए की चाल चलने लगता है तो मर ही जाता है, परन्तु वह अपनी चाल चला, इसलिए जीत गया।'

"यह कहानी तुम जानती हो न ? कहानिया केवल कहानियो के लिए नही होती। उनकी तह में वहुत बड़ा उद्देश्य भरा होता है। भारत की सस्कृति अनोखी है। मै जैसे-जैसे तुम्हे गीता समझाता जाऊगा, वैसे-वैसे उसमे से नए अर्थ निकलते ही जायगे। परन्तु आज इतना पचा लोगी तो यही काफी है। इसे लिख डालना, परन्तु लिखना केवल लिखने के लिए ही नही, गीता का अर्थ अमल में लाने के लिए है। आजका यह सारा पाठ गीता के आधार पर है।"

एक छोटे-से विनोद के कारण मनु को पच्चीस मिनट तक गाधीजी की ऐसी अमृतवाणी जीवन के पाठ के रूप मे सुनने को मिली।

: ६७ :

मेरी जिन्दगी ही स्वयं एक प्रयोग है

फरवरी १९४५ मे गाधीजी वर्धा आये तो श्रीमन्नारायण के पास ठहरे थे। उससे पहले दिसम्बर १९४४ मे भी वह एक

बार यहा ठहर चुके थे। उस समय गाधीजी रात के समय तीन तकिये इस्तेमाल करते थे। लेकिन इस बार उन्होने तकियो का प्रयोग बिलकुल ही छोड दिया। यह देखकर श्रीमन्नारायण ने हिचकिचाते हुए पूछा, "बापूजी, आजकल आप तकिये का प्रयोग क्यो नही करते ?"

गाधीजी ने उत्तर दिया, "मैने कही पढा है कि शवासन से गाढी नीद आती है। वही प्रयोग मै कर रहा हू।"

श्रीमन्नारायण बोले, "बापूजी, आपका पूरा जीवन प्रयोगो से भरा हुआ है। अब इस ढलती उम्र मे आपको दूसरो पर प्रयोग करने चाहिए। इस समय ऐसे प्रयोगो के लिए आपका नाजुक स्वास्थ्य बहुत महगा पड़ेगा।"

यह सुनकर गाधीजी मुस्कराये। बोले, "नही जी, मेरी जिन्दगी ही स्वय एक प्रयोग है और मेरे ये प्रयोग केवल मेरी मौत के साथ ही बन्द होगे।"

: ६८

योगी होने पर भी यह घाव मिट नहीं सकता

आगाखा महल मे नजरबन्दी के समय जब गाधीजी का जन्म-दिन आया तो उनके साथियो ने उसे सुविधानुसार मनाने का निश्चय किया। उनके कमरो को फूलो से सजाया गया। सीढियो पर रागोली डाली। और भी बहुत कुछ किया। प्रार्थना

के समय दीवार पर फूल देखकर गाधीजी ने बा से कहा, "तू नही रोक सकी न इनको ?"

बा बोली, "मैने मना तो किया था मगर ये नही माने।"

गाधीजी सरोजिनी नायडू की ओर मुडे और बोले, "मोहब्बत किसी पर लादनी नही चाहिए।"

सरोजिनी नायडू ने तुरन्त दीवार पर से फूल उतरवा दिये और सीढी के पास रखवा दिये। नाश्ते के समय फलो की सजी हुई टोकरी उनके सामने रखी गई। उन्हे हार पहनाये गये। सरोजिनी नायडू ने फूलो का हार पहनाया और मीराबहन ने सूत का। कटेली ने हार के साथ-साथ हरिजन कार्य के लिए ७४ रुपये भी भेट किए।

गाधीजी नाश्ता कर ही रहे थे कि मीराबहन और प्यारेलाल एक-एक बकरी के बच्चे को लिये हुए आ पहुचे। उनके गलो मे फूल-पत्तो के हार और 'सहनाववतु' मत्र वाले गत्ते लटक रहे थे। मीराबहन ने उनकी ओर से एक छोटी-सी सुन्दर स्तुति कही और उनसे हाथ जुडवा कर प्रणाम करवाया। फिर गाधीजी के हाथ से उन्हे रोटी दिलवाई। मगर उससे पहले ही उन्होने एक-दूसरे के गले में पडे हुए हारो को खाना शुरू कर दिया। गाधीजी बहुत हसे।

इसके बाद सुशीलाबहन ने अपने और वा के सूत का हार पहनाया। प्यारेलाल ने अपना हार पहनाया। फिर सब घूमने के लिए निकले। रास्ते में बापू ने रागोली और सीढी पर लिखे मत्र देखे। सारी फूल मालाये और टोकरी के फूल महादेवभाई की समाधि पर ले गये। प्रार्थना की। प्रार्थना से पहले प्यारेलाल

ने महादेवभाई के सूत का हार गाधीजी को पहनाया। उनकी आखो मे आसू झलक आये।

घूमते समय उन्होने सुशीलाबहन से पूछा, "तूने भर्तृहरि की कथा सुनी है ?"

सुशीलाबहन ने उत्तर दिया, "जीहा, सुनी है।"

गाधीजी वोले, "योगी होने के वाद अत मे भर्तृहरि को अपनी पत्नी के पास भीख मागने जाना था। उस समय उसे अपने भाई का और उसके प्रति अपने बर्ताव का स्मरण हो आया। वोल उठा, 'आ रे जखम जोगे नही जशे,' अर्थात् योगी होने पर भी यह घाव मिट नही सकता। यही बात महादेव के चले जाने के घाव पर भी लागू होती है।"

: ६९

कुमारप्पा, तुम सुखी जीव हो

अखिल भारत ग्रामोद्योग सग के स्थापित हो जाने के बाद उसके मार्ग-दर्शन के लिए गाधीजी मगनवाडी आकर ठहरे थे। उस समय उन लोगो का यह नियम था कि प्रत्येक व्यक्ति प्रतिदिन के कार्य मे भाग ले। रसोईघर के झूठे और मैले वर्तन भी वह माजते थे। एक दिन ऐसा हुआ कि यह काम गाधीजी और कुमारप्पा के हिस्से मे आया। बस वे दोनो कुए के पास बैठकर वर्तनो को रगड-रगड कर उन पर लगी हुई कालिख छुटाने लगे।

कि कुछ अछूत जातियो के सत्याग्रही अपने समाज की किसी कथित शिकायत के विरुद्ध सत्याग्रह करने के लिए आश्रम मे आ पहुचे। गाधीजी तो अजातशत्रु थे। उन्होने उन सत्याग्रहियो का स्वागत किया। उनसे कहा, "आप लोग अपने रहने के लिए जगह का चुनाव कर ले। आप चाहे तो मै यह कुटिया आपके लिए खाली कर दूगा।"

लेकिन उन लोगो ने कस्तूरबा की कुटिया मे रहने की इच्छा प्रकट की। हॅसते हुए कस्तूरबा ने पूछा, "मै कहा रहूगी ?"

गाधीजी बोले, "तुम्हे ज्यादा स्थान की जरूरत नही होगी और क्या तुम जानती हो कि मैने तो अपनी कुटिया देने का प्रस्ताव किया था।"

बा बोली, "आपने इसीलिए किया था कि वे आपके बालक है।"

गाधीजी ने कहा, "क्या वे तुम्हारे भी उतने ही बालक नही है ?"

निरुत्तर बा मौन हो रही और वे मेहमान जबतक रहे, उन्हीकी कुटिया मे रहे।

संदर्भ

इस पुस्तक के प्रसग जिन पुस्तको से सपादित रूप मे लिये गए है, उनके नाम, प्रसगो की सख्या तथा लेखको का नाम साभार दिये जा रहे हैं।

अकाल पुरुप गाधी (जैनेन्द्रकुमार) २१, ३७
इग्लैड मे गाधीजी (महादेव देसाई) ४, ६२
आत्म-कथा (मो० क० गाधी) १८, ६४, ६५
एकला चालोरे (मनुवहन गाधी) ८, २६, ६६
ऐसे थे बापू (आर० के० प्रभु) ५३, ५६
गाधी व्यक्तित्व विचार और प्रभाव (सकलन) ३,
गाधी व्यक्तित्व विचार और प्रभाव (सकलन) लक्ष्मी देवदास गाधी ५
गाधी व्यक्तित्व विचार और प्रभाव (सकलन) तुलसी मेहर ६,
गाधी व्यक्तित्व विचार और प्रभाव (सकलन) कमलनयन १०, ११
गाधी व्यक्तित्व विचार और प्रभाव (सकलन) जगजीवनराम १७
गाधी व्यक्तित्व विचार और प्रभाव (सकलन) रामनाथ सुमन १६
गाधी व्यक्तित्व विचार और प्रभाव (सकलन) जानकीदेवी वजाज २६
गाधी व्यक्तित्व विचार और प्रभाव (सकलन) सीताराम सेक्सरिया ३०
गाधी व्यक्तित्व विचार और प्रभाव (सकलन) डा० युद्धवीरसिह ३१
गाधी व्यक्तित्व विचार और प्रभाव (सकलन) मार्तण्ड उपाध्याय ३३
गाधी व्यक्तित्व विचार और प्रभाव (सकलन) अगाथा हेरिसन ३८
गाधी व्यक्तित्व विचार और प्रभाव (सकलन) डा० राजेन्द्रप्रसाद ३६, ४१, ४२
गाधी व्यक्तित्व विचार और प्रभाव (सकलन) होरेस अलैक्जैण्डर ४०

गाधी · व्यक्तित्व विचार और प्रभाव (सकलन) महादेव देसाई ४३, ७०
गाधी · व्यक्तित्व विचार और प्रभाव (सकलन) भागीरथ कानोडिया ७
गाधीजी की साधना (रावजीभाई पटेल) २, ५२
गाधीजी के जीवन-प्रसग (सकलन) श्रीमन्नारायण ६७
गाधीजी के जीवन-प्रसग (सकलन) जे० सी० कुमारप्पा ६६,
गाधीजी के जीवन-प्रसग (सकलन) डा० पट्टाभि सीतारामैया ५१,
गाधीजी के सपर्क मे (सम्पा० चद्रशकर शुक्ल) ६, १२, १३, १४,
१५, १६, २८, ४६, ४७, ४८, ४६, ५७, ५८, ६३,
गाधीजी के सस्मरण (शातिकुमार) २०, २२, २७, ३२, ३५, ४४,
गाधी शताब्दी पारिजात स्मारिका ५४,
बच्चो के बापू २५,
बा और बापू की शीतल छाया मे (मनुबहन गाधी) ५६,
बापू की कारावास कहानी (डा० सुशीला नैय्यर) ३४, ३६, ४५, ६८,
बापू की झाकिया (काका सा० कालेलकर) ५५, ६०
बापू के सस्मरण (रामजनमसिंह शिरीष) ६१
भूमिपुत्र (विनुभाई शाह) २४,
महात्मा गाधी पूर्णाहुति (प्यारेलाल) १, ५०,
मेरे सस्मरण (ग० वा० मावलकर) २३